मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :
परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक :
सेठ दुर्गादासजी

२	सितम्बर १९७५	संख्या ५

मानवता

लेखक :

सेठ दुर्गा दास साहिब, चण्डीगढ़ ।

यदि आप मानव हैं, तो अपने दिल में हर एक के लिये सहानुभूति होनी चाहिए। यदि आप मानव हैं, तो आप के दिल में हर एक के लिए प्रेम होना चाहिए। यदि आप मानव हैं, तो आप के दिल में करुणा, कृपा दया भाव होना चाहिए। यदि आप मानव हैं तो आपको न्यायप्रिय होना चाहिए। यदि आप मानव हैं तो आपको कृतज्ञ होना चाहिए। कदि आप मानव हैं तो आपको सत्यप्रिय होना चाहिए। यदि आप मानव हैं तो आपको सत्य का ज्ञान होना चाहिए। यदि आप मानव हैं तो आपको अंगपाल होना चाहिए ।

मित्र दुखी न हो दूखारी। तापर विपता आवत भारी ॥

निस्संदेह हम मानव हैं और हमें मानव बनने में गर्व है। लेकिन मानवता की मांग है कि ऊपर

लिखे गये सब गुण मानव में होने च

सब गुण मानव में हैं, फिर भी इसको मानव कहना भूल होगी यदि इसने अपनी नेक कमाई में से प्रतिदिन, हर महीने या हर साल अपनी कमाई का कुछ भाग दान नहीं किया। केवल दानी पुरुष के यह सब गुण हो सकते हैं। यदि पुरुष दानी नहीं है तो वह इन सब गुणों से खाली होगा।

इसलिए दान देना मानव का सबसे पहला धर्म है। इससे बड़ा धर्म कोई नहीं है। दान का दर्जा ईश्वर की भक्ति के बराबर है।

कहे कबीरा बात दो, लखनहार लख ले।
कै साहिब की बन्दगी, कै साहिब कुछ दे।।

दान देना कोई कठिन काम नहीं है। केवल अपने मन को समझाना है। अपनी पत्नी के लिए साढ़ी, ज़ेवर और अन्य आवश्यकतायें पूरी करते हो। आप स्वयं भी तो कई प्रकार का व्यर्थ खर्च करते हो। आप को क्षिकायत है कि घर का खर्च अधिक है, आमदन कम है। लेकिन जब आपके वेतन में वृद्धि हो जाती है। फिर क्या करते हो। जब व्यापार में लाभ होता है, आपने लड़के को शिक्षा दी, वह

[illegible] बेकार है। नौकरी मिली नहीं, दूसरा कोई काम करता नहीं। दूसरे लड़के को डाक्टर बनाया, वकालत पढ़ाई, वह इंगलैंड चला गया, वहां उसने खूब रुपया कमाया, वहां ही विवाह कर लिया, इसकी ओर से कोई पत्र नहीं, कोई समाचार नहीं। दोनों लड़कों पर आपने खूब रुपया खर्च किया। अच्छा किया। आपका इनको पढ़ाना कर्तव्य था। लेकिन अब आप उदास हैं क्योंकि वापसी की कोई आशा नहीं। वापसी नहीं हुई। यदि आप अपनी नेक कमाई का कुछ भाग प्रतिदिन इसी प्रकार दान में खर्च देते तो आप को कभी दुख न होता। अब भी समय को हाथ से मत जाने दो। क्या पता कल क्या हो जाये।

> कबीर यह तन जात है. सको तो राख बहोर।
> खाली हाथों वह गये, जिनके लाख करोड़॥

इसलिए देर न कर। अभी पक्का इरादा करलो कि अपनी कमाई का कुछ भाग प्रतिदिन दान किया करूंगा। आपका जीवन रंग लायेगा। बहुत अच्छा हो जायेगा।

क्या हुआ यदि आपने कारोबा

क्या हुआ यदि आपने उन्नति करके ह... ...पए मासिक वेतन ले लिया । क्या हुआ यदि आपने मकान और कोठीआं बना लीं । क्या हुआ यदि आपको हजारों रुपये मासिक कोठियों का किराया आता है। क्या हुआ यदि आपके खाते में बैंक में लाखों है। क्या हुआ कि यदि आपकी मान प्रतिष्ठा नगर में धन के कारण है। लेकिन इन सब बातों के होते हुये भी आपका जीवन अकार्थ जा रहा है यदि आपने अपने जीवन में किसी गरोब की सहायता नहीं की, किसी गरीब के लड़के को शिक्षा नहीं दलवाई, भूखे को रोटी नहीं दो, नंगे को कपड़ा नहीं दिया। भोग बिलास का जीबन पशु वत है यदि मानवता का कोई काम न किया

दान देने की सबसे अच्छी विधि यह है कि अपनी आवश्यकताओं को कम कर दो। यदि आप अपनी सम्पति या अपने वेतन से दान नहीं कर सकते हो या आपका दिल नहीं मानता कि दान सरमाया में से किया जाये। तो आवश्यकताओं को कम कर दो।

बचत हो इसको दान में दे दिया करो।

मानव जीवन एक नहमत है, जो आपको मिली है । यह नहमत सिद्ध होगी यदि आपने किसी पर दया की, किसी गरीब की सहायता की। अन्यथा हैवान और इन्सान में क्या अन्तर हैं। दोनों खाते हैं, सोते हैं। दोनों भय करते हैं। दोनों को जीवन से प्यार है। दोनों मौत से डरते हैं। अन्तर केवल यही है कि हैवान किसी का भला नहीं कर सकता। यदि मानव किसी का भला नहीं कर करता है तो वह भी हैवान है।

इसलिए ऐ मानव। मनुष्य बन। अपना भविष्य इसी संसार में बना लो ताकि भावी जीवन में आप को सब सुख मिलें। सुख दोगे सुख मिलेगा। धन दोगे धन मिलेगा। अन्न दोगेअन्न मिले गा। इसी तरह भावी जीवन की इमारत बना लो। यदि आपने हरिद्वार जाना हो, किसी पहाड़ की सैर को जाना हो या किसी दूर स्थान को जाना हो तो कई दिन पहले यात्रा की तैयारी में लग जाते हो। सब प्रकार का

सामान तैयार करते हो और साथ ले [illegible] हो। बिस्तर, कपड़े, खाना, खर्च आदि। भला परलोक यात्रा के लिए क्यों तैयारी नहीं की जाती है। पता है आपने सफर करना है। इस अन्तिम यात्रा के लिए कुछ प्रबन्ध तो कर लो। इसी में कल्याण है।

जो कपड़ा अपने तन से उतार कर नंगे को दिया जाता है। अपने निजी भोजन से भूखे को रोटी दी जाती है, जो दान अपनी आवश्यकतायों को कम करके किया जाये, ऐसे दान का पुण्य सौ गुणा, हज़ार गुणा और दस हज़ार गुणा मिलता है। ऐसे दान की गूंज और पहुंच प्रभु के दरवार तक जाती है।

पूरा पूरी दीजिईये, रोटी में से टूक।
कहैं कबीर ता दास को, कहां न आवे कूक॥

कबीर साहिब फरमाते हैं। जो अपनी रोटी का टुकड़ा दूसरों को खिलाते हैं, उनको इस संसार में किसी प्रकार की कमी न रहेगी। यह है रोटी का टुकड़ा देने का फल।

आओ मैं आपको एक सच्ची बात सुनाऊं। दिल्ली में एक बजाज साहिब हैं। उन्होंने सुनाई।

यह [illegible] की आप बीती है। वह कहते हैं कि पाकिस्तान बनने से पहले इनका निवास स्थान गोजरांवाला था। इसके बड़े भाई के दो लड़के शिक्षा पाने के लिए इसके पास रहते थे। स्कूल में छुट्टियां होगईं तो वह लड़कों को लेकर कोहाट (जो इस समय पाकिस्तान में है) चला गया। वहाँ इसका बड़ा भाई ठेकेदारी करता था। सफर लम्बा था। सायं घर पहुंचे। खाना खाया। इतने में पता लगा कि कोहाट में एक थ्येटर आया हुआ है। लड़कोंने अपने चाचा से थ्येटर जाने की प्रार्थना की। ठेकेदार साहिब कोहाट से बाहर गये हुये थे। लेकिन बजाज साहिब कहने लगे कि हम सब थके हुये हैं। इतना लम्बा सफर किया है। आज आराम करना चाहिये। लेकिन लड़के न माने। दोबारा इनको सम्झाया। लेकिन लड़कों ने ज़िद की कि थ्येटर देखने आवश्य जायेंगे। आखर बजाज साहिब ने यह कहकर लड़कों को रज़ामन्द कर लिया कि पाँच रुपये खर्च हो जायेंगे। यह पाँच रुपये यदि किसी गरीब को दे दिये

जायें फिर तो ठीक और थ्येटर न द...
मान गये और उन्होंने पाँच रुपये लेकर अलमा...
में रख दिये ताकि कल प्रातः किसी फकीर क...
दे देंगे ।

इनकी कोठी के सामने एक मसजिद थी । वहाँ एक बूढ़ा मौलवी रहता था । गरीब इलाका था । जो गरीब पठान वहां आ जाते उनको नमाज़ पढ़ा दिया करता । कोई कोई नमाज़ी इसके लिए रोटी ले आया करता । लेकिन कई दिनों से इसके लिए कोई खाना न लाया और मौलवी बेचारा भूख से कमज़ोर हो चुका था । रात को हाथ जोड़ कर खुदा से प्रार्थना करने लगा । ऐ खुदा ! क्या मैं भूखा ही मर जाऊंगा ? जब आंखें बन्द किये पुकार कर रहा था । एक बूढ़ा सफेद दाढ़ीवाला व्यक्ति इसको दिखाई दिया । इसने कहा कि सामने कोठी में तेरे 5 रुपये रखे हुए हैं । प्रातः जाकर ले आना । आंख खुली बूढ़ा लोप हो गया था ।

...त. हुई। मौल ी जी कोठी पर गये। दरवाज़े पर आवाज़ लगाई। नौकर आया। इसको कहा कि मालिक को बुला लाओ। बजाज साहिब आ गये। मोलवी साहिव ने कहा कि जो पांच रुपये कल रात आपने निकाल कर रखे हैं मुझे दे दीजिए। बजाज साहिब बड़े चकित हुये। इसको कैसे पता चल गया। तुरन्त बोल उठे। जाओ २ हमने कोई रुपये नहीं रखे हुये हैं। तो मौलवी ने कहा। मैं कई दिनों से भूखा हूं। कल रात मालिक से प्रार्थना कर रहा था कि गैबी शकल ने कहा कि जाओ सामने कोठी में तुम्हारे लिए पांच रुपए रखे हुए हैं। मैं तो इसलिए आ गया हूं। बजाज साहिब ने आओ देखा न ताओ तुरन्त रुपये लाकर मौलवी को दे दिये।

यह है दान की महिमा जिसका पता उसी समय प्रभु के दरबार तक पहुंच जाता है। दान दो अवश्य दो। इसी में आपका कल्याण है। अपनी निजी आवश्यकताओं को कम करके दान दिया करो। एक सौ रुपये का कोट न पहना पचास रुपये

वाला मोल ले लिया । जो स
कर दिया ।

देह धरे का धर्म ईह. दे दे कुछ दे।
देह खेह हो जायेगी, फिर कौन कहेगा दे ।।

जो दूसरों के हक पर छापा मारता है। इसको मानव कहना महान भूल है। देखने में शकल मानव की है लेकिन वह हैवान है। गुरु नानक साहिब फरमाते हैं।

हक पराया नानका, क्या गाय क्या सूर।

हिन्दू मुसलमान सब के लिए दूसरे के हक पर डाका मारना हिन्दू के लिये गाय और मुसलमान के लिए सूर के सामान है। अर्थात सब के लिए हराम है। दूसरे के हक को अपना अधिकार समझना मानवता नहीं। केवल हैवान यह काम करते हैं। यदि आप अपनी गाय के लिए चारा इसके सामने रख देवे, तो इस चारा को देख कर सब पशु इस चारा को खाने के लिए दौड़े आयेंगे। क्योंकि इनको अपने और दूसरे के हक की पहचान नहीं है। यदि किसी मानव के सामने दूसरे का खाना रख दिया जाये क्या

[illegible]नव इस खाने की ओर दृष्टि तक डाल ।

इसलिए ऐ मानव ! तू मानवता के काम कर । किसी के अधिकार को अपना अधिकार मत समझ अन्यथा कर्म का फल अवश्य मिलेगा और मिलकर रहेगा ।

अगम लो

भाग दूसरा

सत्संग हजूर परमदयाल परमसंत बाबा फकीर चन्द जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर ।

दिनांक ८ जून १९७५

गुरु ने अब दीना भेद अगम का, सुरत चली तज देश भरम का ।

राधास्वामी । ऐ मेरे बनाने-वाले ! तूने मुझे क्यों बनाया । यदि बनाया, तो खव्त क्यों दिया ? जबर्दस्त मारे और रोने न दे । दोस्तो ! जीवन में तलाश थी और किसी सीमा तक अब भी हैं । साधारण हिन्दू होने के नाते मैं ईश्वर परमेश्वर राम कृष्ण को माना करता था । मालिक को मिलना चाहता था । मन में जनून था । यह खोज और मेरा जनून मुझे हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गया । उन्होंने यह गुरुमर्त मुझे सौंपा । अभी जो पहले बेनती पढ़ी गई ।

दयाला, धन्य उदार सुसहज कृपाला।
जम फांसी, तुम्हारी कृपा अविद्या नासी ॥
अब नहीं व्यापे काल न माया, अब मैं रहूं न जग उरझाया।
जीवन मुक्ति दशा चित लाऊं, जल में कमल समान रहाऊं ॥

मेरे अन्तर में जो वस्तु है, जिसको यह काल और माया नहीं व्यापते, जिसकी यम की फांसी कट गई और जिसको जीवनमुक्त अवस्था मिल गई वह क्या वस्तु है? मैं उसकी तालाश करता रहता हूं। इस शब्द में गुरु की महिमा गाई गई है। गुरु ने यम की फांसी काट दी। जिसकी फांसी कटी, वह कौन सी वस्तु है और उसके बारे मुझे क्या पता लगा? मैंने प्रण किया था कि अपने जीवन का अनुभव कह जाऊंगा। पता नहीं मेरा अनुभव ठीक है या ग़लत हैं। मेरे अन्तर एक तालाश थी, कुरीद थी और जज्बा था और मैं जानना चाहता था कि वह क्या वस्तु है, जो यह कहती है कि मेरी फांसी कट गई और वह भेद क्या है, जिससे आदमी को यह पता लगता है कि—

गुरु ने अब दीन्हा भेद अगम का, सुरत चली तज देश भरमका।

मैं अपने आप से प्रश्न करता हूं कि भरम का देश कौन सा है और भरम क्या है? वह वस्तु है तो

कुछ और, लेकिन हम उसको कुछ और समझ... है। इसका नाम भ्रम है। जैसे रात के समय एक रस्सी को तुम सांप समझ लेते हो। वह तुम्हारा भ्रम है। मेरे भ्रम कैसे गये ? मैं बचपन से अभ्यास करता हुआ आ रहा हूं। राम को मिलना चाहता था। जबसे मुझे यह पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होकर उनके अन्त समय पर उनको ले जाता है और मैं नहीं होता तो मुझे समझ आ गई कि मेरे अन्तर भी जो रूप हजूर दाता जी महाराज का प्रकट होता है या और भाव विचार पैदा होते हैं, यह असलियत नहीं हैं बल्कि मन का खेल है और माया है। इस एक बिचार ने मेरे जीवन को बदल दिया। अब या तो मुझे दीवाना समझो या मैं सच्चाई पर हूं। इसका मुझे पता नहीं। मुझे प्रतिदिन इस प्रकार के पत्र आते हैं और लोग आकर स्वयं भी बताते हैं। इस महिला के लड़के का बाज़ू टूट गया। वह कहता है बाबा जी आये और अपना मास उतार कर मेरे बाज़ू पर लगा रहे हैं कि तू ठीक हो जायेगा। अब मैं अपने आप से पूछता हूं कि क्या तुम इस लड़के को जानते हो और क्या तुम इस लड़के के अन्तर गये थे ? नहीं। वह सब इस लड़के का भ्रम था।

सन्तमत को समझने में बीत गया।
सोचता हूं कि स्वामी जी के पास क्या अधिकार था कि उन्होंने सबका खण्डन कर दिया और सारे ऋषियों मुनिओं और सब मत मतान्तरों को कालमत में रखा। मुझे समझ नहीं आती थी। गुरु की सेवा करने को आज्ञा थी। मुझ से जितनी हो सकी, मैंने की। मगर यह भेद समझ में नहीं आता था। इसलिए उन्होंने मुझे यह काम दिया था। मैं न गुरु हूं न महात्मा हूं और न ही मुझे गुरु बनने की हवस है। आप लोगों की दया से मेरी यम की फांसी कटी। मुझे विश्वास हो गया कि जो कुछ मेरे अन्तर में प्रगट होता है, वह मेरे प्रालब्ध कर्मों के कारण या पढ़ने सुनने और छूने के कारण जो संस्कार मेरे मस्तिष्क पर पड़े हुये है, यह वही शकलें बनकर मेरे सामने आती हैं। अब जब भ्रम की फांसी कट गई तो शेष क्या रहा? जिस बस्तु के भ्रम की फांसी कट गई वह क्या वस्तु हैं? उसकी खोज करता रहता हूं। यह इस समय मेरे बुढ़ापे के जीवन की खोज है। जो कुछ हम अपने अन्तर में देखते हैं, हम उसको सच मानते हैं, लेकित असल में

वह सच नहीं है। मेरा रूप तुम्हारे अन्तर .. ाता है। तुम उसको सत्य मानते हो लेकिन मैं तो होता नहीं, तो फिर वह सत्य न हुआ न ? इसलिए वह तुम्हारा भ्रम है। इसलिए स्वामी जी महाराज ने जो सबका खण्डन किया है वह ठीक हैं। मैं जानता हूं कि मैं ऊंचा बोल रहा हूं। मगर यह मेरे वश की बात नहीं है। जिस अवस्था में कोई होता हैं वह वहां की ही बात करता है। जिसकी भ्रम की फांसी कटी नहीं वही चक्कर में आती है और उसी को जन्म लेना पड़ता है।

बल पाया अब बिरह मरम का, भटकन छूटा दैरो हरम का।

गुरु ने भेद दिया, भ्रम काट दिया और नरक और स्वर्ग का भ्रम समाप्त हो गया। कैसे गया ? सुनो ! एक आदमी सूबेदार हजारीसिंह का मुझ पर बहुत विश्वास है। उसने मुझे बताया कि उसका चाचा बहुत बीमार था। उसका ओप्रेशन हुआ। ओप्रेशन के समय वह बेहोश था। जब होश आई तो वह हजारी सिंह से कहने लगा कि तुम्हारा मैं बहुत अभारी हूं। दो आदमी आये और मेरी रूह को हाथपर रखकर आसमान की ओर उढ़ गये। वहाँ

[illegible] रूहें थीं। वहां एक बहुत बड़ी लम्बी [illegible] काले रंग की स्त्री आई। उसकी ज़बान बहुत लम्बी थी और वह रूहों को खाने लगी। मैं डर गया कि अब यह मुझे भी खा जायेगी। मैंने उससे कहा कि हज़ारीसिंह को बुलाओ। उन्होंने बुलाया। मैंने हज़ारीसिंह से कहा कि तुम बाबा जी को बुलाओ और उनसे कहो कि मुझे इस स्त्री से बचायें वरना वह मुझे खा जायेगी। बाबा जी आ गये और आते ही मुझे आज्ञा दी कि तुम अपने घर वापिस जाओ और उस स्त्री से कहा कि तुम इसको नहीं खा सकती। अब तुम सोचो कि न तो मैं वहां गया और न कुछ कहा। इसलिए जब मैं वहां नहीं था और जो कुछ हज़ारीसिंह के चाचा ने वहां देखा वह भी कुछ नहीं था। न नरक था न स्वर्ग था, जो कुछ था, वह उसका अपना ही बिचार था और संस्कार था।

मेरी माता जी ने मुझे एक वार बताया कि बच्चा! तेरे पैदा होने से बहुत पहले की बात है कि एक बार मैं बहुत बीमार हो गई। बहोश थी। दो आदमी आये और मुझे पकड़ कर ले गये। आगे एक बूढ़ी

स्त्री ताज पहने हुये बैठी थी। उसके सा[illegible] पेश कर दिया। उस स्त्री ने कहा कि यह वह पार्वती नहीं है। वह तो दूसरे गांव की है। उसने मुझे मक्की की रोटी और साग दिया और कहा कि जा, अभी तू बहुत दिन जीयेगी। उसके बाद मेरी माता बहुत दिन तक जीवित रही।

यह जो मरते समय आदमी के पास आता है, यह क्या है ? जिस प्रकार के संस्कार या वातावरण के प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ते हैं उसी प्रकार के दृष्य उसको दिखाई देते हैं। किसी को स्वप्न में सांप दिखाई देता है और वह डरता है। कोई आसमान पर उड़ता है। किसी को मंदिर, गुरद्वारे या कोई देवी देवता दिखाई देता है, किसी को राम कृष्ण या गुरु दिखाई देता है। यह सब अपने २ संस्कारों के अनुसार शकलें दिखाई देती हैं। क्योंकि उस जीव को कोई सत्गुरु नहीं मिला और उसके भ्रम नहीं कटे इसलिए वह नरक और स्वर्ग के धक्के खाता है और दुख सुख उठाता रहता है। यह है भेद।

में हूं समय का सत्गुरु, भेद और रहस्य बताना मेरा कर्तब्य है ताकि भरमे हुये जीव यदि मेरी बात

...और सुख से बच जायें और मेरा इस ...म का केवल यही तात्पर्य है और कुछ नहीं। क्योंकि हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए गुरु आज्ञावस जो कुछ मैंने समझा है वह बताता रहता हुं। तुम स्वयं ही सोचो कि कोई धर्म या कोई गुरु ऐसी बातें नहीं बताता। सब हमको भ्रम में रखते हैं। लेकिन उनका भी कोई दोष नहीं। हम लोग भी भ्रम में खुशी और आनन्द लेते हैं। आदमी के अपने ही मन के बिचारों से नरक है और अपने ही मन के विचारों से स्वर्ग है। हर एक आदमी अपने २ स्वार्थ में मगन हैं। जिसको सच्चाई की की लगन होती है, मालिक को मिलना चाहता है और आवागवन से छुटकारा चाहता है, वह इस ओर आता है। मुझे यह लगन थी, मालिक को मिलना चाहता था। इसलिए में इस मार्ग पर चला।

बर्षन लागा मेघ करम का, संशय भागा जन्म मरन का।

दया और रहम की वर्षा होने लगी। देखो! दया उस पर होती है, जिसमें विरह और लगन होती है। जिसको किसी वस्तु की सच्ची इच्छा होती है।

वह उसको आवश्य मिलती है । य[illegible]
और लगन नहीं है, तो तुम पर दया भी नह। हो सकती। मेरे पास कई आदमी आते हैं और कहते हैं कि बाबा जी। दया करो। बाबा क्या कर सकता है ? यदि तुम्हारे अन्तर में किसी वस्तु की इच्छा है, तो वह तो तुमको अवश्य मिलेगी। जो आदमी दीन दुखी और आर्त होकर किसी इच्छा को लेकर मेरे पास आता है, मैं मिर्भय होकर उसको कह देता हूं कि जा ! तेरा काम हो जायेगा और वह हो जाता है। क्या में करता हूं ? नहीं ! उसकी सच्ची इच्छा और सच्चा चाह करती है। कोई गुरु फूंक नहीं मार सकता। मैं हूं रहस्यज्ञाता। आदमी की सच्ची इच्छा का सबूत उसका आर्तपना है और आर्तपने का प्रभाव आदमी के चेहरे पर आता है। जिस प्रकार के भाव अन्तर में होते हैं वह आदमी के चेहरे पर आ जाते हैं और मैं पहचान जाता हुं। जिनके अन्तर सच्ची लगन और इच्छा नहीं होती, मैं उनकी ओर ध्यान नहीं देता। यदि तुम्हारे अन्तर में किसी बस्तु की प्रवल इच्छा है और सच्ची लगन है तो तुम पर दया

...वश्य होगी अवश्य होगी। यदि इच्छा प्रबल है तो जो मांगोगे मिलेगा :

मालिक के दरबार में कमी वस्तु की नाहीं।
बन्दा मौज न पावई, चूक चाकरी माहीं॥

चाकरी क्या है ? जो कुछ तुम चाहते हो उसकी प्रवल इच्छा रखो। मौज देती है, यह प्रकृति का नियम है।

जन्म मरण का सशय या जन्म मरण कब जायेगा ? वह वस्तु जिसकी फांसी कटी और जिसके भ्रम गये, जब तक वह मोजूद है उसका जन्म मरन अनिवार्य है। जब तक वह वस्तु मौजूद है वह कहीं न कहीं तो अवश्य टहरेगी। जहाँ वह ठहरेगी वहाँ ही उसका जन्म मरण होता रहेगा। जब तक तुम्हारा "है पना" कायम है वह कहीं न कहीं अवश्य ठहरेगा चाहे शारीरिक जीवन में ठहरे, चाहे मानसिक जीवन में ठहरे, चाहे प्रकाश या शब्द में ठहरे, चाहे ऊपर के किसी लोक में ठहरे। क्योंकि उसकी हस्ती कायम है ; इसलिए जन्म मरण समाप्त नहीं होगा। मैं इस जन्म मरण की फांसी को काटना चाहता हूं और किसी हद तक वह कटी हुई जान पड़ती है। कैसे ?

अपने अन्तर में तलाश करता हूं।
"है पने" को भूल जाता हूं। तो उसके बाद खामाशी आ जाती है। तो मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि वह वस्तु जिसको सन्त सुरत कहते हैं। वह भी प्रगट होती है। यदि आदमी को यह ज्ञान मिल जाये जो मझे मिला कि मैं चेतन का एक बुलबला हूं। यदि यह विचार पक्का हो जाये, तो फिर "है पना" भी समाप्त। अन्तिम अवस्था है अनामी धाम :

सुरत हुई अतिकर मगनानी, पुरुष अनामी जाय समानी।

इस अनामीपने में न 'मैं' ओर न 'तू' न संसार न द्रष्टा और न दृष्टी। मैं चाहता हूं कि मेरा मैंपना न रहे। मगर अभी तक मैं सफल नहीं हुआ। जन्म मरण को कौन काट सकता है? ज्ञान और अनुभव। मुझे क्या अनुभव हुआ? मैं उस वस्तु की तलाश करता हुआ सब कुछ भूल जाता हूं, तो फिर न जन्म और न मरण। जब "मैं" ही न रही तो फिर जन्म मरण किसको होगा। यह बहुत ऊंची मंजल हैं। धार्मिक संसार में वेदान्त को सबसे ऊंचा माना गया है और यह संसार में सुख और शान्ति देता है। मगर सन्तों ने इसको कालमत कहा है और यह है

मुझे यह अनुभव हो गया कि यह सब काल और माया है। तो मेरी हस्ती समाप्त कैसे होगी ? मुझे मार्ग मिल गया। मैं साधन करता हूं। अब मेरा इष्टपद क्या है ? न प्रकाश और न शब्द। वह क्या है ?

अकह अपार अगाध अनामी। अस मेरे प्यारे राधास्वामी।

वह परमतत्व जो इस संसार का आधार है, जिससे सारा संसार पैदा होता है और जिस में जब गति होती है तो शब्द प्रकट होता है। मैं उसको अपना इष्टपद समझता हूं और उसी को मैं दाता दयाल जी महाराज समझता हूं। चल रहा हूं। पता नहीं मैं सफल हूंगा या नहीं। सुरतपद तक तो मैं हूं। इससे आगे अलख और अगम का साधन करता रहता हूं। असल में जन्म मरण कुछ नहीं। मगर जब तक मेरी हस्ती कायम है और भ्रम है तब तक जन्म मरण भी कायम है। स्वामी जी महाराज ने कहा है

सब की आद कहूं अब स्वामी. अकह अपार अगाध अनामी।

वह है हमारा इष्ट और वह बहुत ऊंचा है।

तोड़ दिया सब जाल निगम का, सुख पाया अब हम दम २ का।

निगम है अज्ञान। गुरु ने भेद दिया और अज्ञान

का जाल कट गया। मेरी सुरत विचारों... त मान कर दुख और सुख उठाती थी। अच्छा बिचार आया तो सुख मिला और बुरा विचार आया तो दुख हुआ। जब भेद मिल गया कि यह सब माया है तो मैं इस दुख और सुख से बच गया। इन बिचारों को माया समझ कर इन में न फंसना ही निगम के जाल को तोड़ना है। जब मन के बिचारों को सत न मानोगे तो न दुख और न सुख।

फल पाया आज हम सम दमका, भंवर हुआ मन सेत पदम का।

अब तप योग साधन अभ्यास का यह फल मिला। संसार वाले सारी आयु साधन में ही व्यतीत कर देते हैं। साधन इष्टपद नहीं है। यह साधन तो एक उपाय है। जैसे तुम आटा दाल, सब्जी, घी: नमक, मिरच, पानी और लकड़ी इकट्ठी करके खाना बनाते हो फिर उसको खाते हो। खाने से क्या होता है? पेट भर जाता है, भूख चली जाती है और शान्ति मिलती है। तो इष्टपद क्या है? शान्ति तसकीन। सफेद रंग की रोशनी अर्थात सेत पदम को प्राप्त किया। शान्ति मिल गई। जब तक किसी सतपुरुष से यह भेद प्राप्त नहीं करोगे तुमको अभयपद नहीं

मिलेगा [illegible]यपद क्या है ? जो होता है होता रहे । यह विश्वास कर लेना कि जो मालिक करता है अच्छा करता है । इस विश्वास से किसी कठिन समय में या दुख मैं हाय २ न करना और दिल में भ्रम न करना कि हाय यह न हो जाये या वह न हो जाये । इसका नाम अभयपद है । यदि तुम्हें निज अनुभव न हो तो तुम अभयपद को प्राप्त नहीं कर सकते । इस लिए निज अनुभव को प्राप्त करने के लिए यह साधन अभ्यास कराया जाता है ताकि अपनी हस्ती के सारे बोधभानों का ज्ञान हो जावे कि सहसदल क्या है; त्रिकुटी क्या है, सुन्न महासुन्न और भंवरगुफा क्या है और सतलोक क्या है । यह हमारे जीवन के बोध भान हैं feelings of life हैं । जो अभ्यास करेगा वह अपने मन की सब हालतों का अनुभव कर सकेगा और उसको अनुभव हो जायेगा । पहले केवल सुमरिन और ध्यान ही बताने का दस्तूर था । जब कुछ अनुभव हो जाता तो फिर सार भेद बताया जाता था । मैंने यह सब साधन किये हुये हैं । मैंने एक बार अपने अन्तर के हालात एक सौ पृष्ट के पत्र पर लिख कर हजूर दाता दयाल जो महाराज को भेजे थे ।

उन्होने पन्द्रह पृष्ट के पत्र द्वारा उसका उत्तर दिया था। यह रोशनियें जो हमारे अन्तर प्रकट होती हैं, यह क्या है ? यह हमारी ही हस्ती के बोधभान हैं। लेकिन बिना अनुभव के सार भेद की समझ नहीं आती। आजकल क्योंकि गुरुलोग और महात्मालोग संसार को अज्ञान में रखकर उनसे धन मान प्रतिष्ठा लेते हैं। इसलिए मैंने यह सचाई बताने का यत्न किया है। ताकि लोग इस लूट से बच जायें।

कल एक स्त्री का दिल्ली से पत्र आया कि बाबा जी ! एक प्रेत आकर मुझे तंग किया करता था। आपको याद किया, आप आये और आपने मार कर उसको भगा दिया। अब वह प्रेत तो नहीं आता लेकिन प्रात: साँय उसकी आवाज मकान के बाहर आतो है। मैं तो गया नहीं उस प्रेत को निकालने। अब तुम सोचो कि जब मैं वहां नहीं था तो वहां प्रेत भी नहीं था। इन बातों को परदे में रखकर गुरुओं और महात्माओं ने लूट मचा रखी है। इसलिए मैं गृहस्थियों के लिए प्रकट हुआ हूं कि तुम बात को समझो। लेना देना बुरा नहीं है। यह संसार का व्यवहार है। सेपै के बिना न गृहस्थियों और न

गुरुओं का निर्वाह है। बरी मैं भी नहीं। मैं भी लेता हूं। अपने लिए नहीं तो मंदिर के लिए तो लेता हूं। मगर किसी को अज्ञान मैं रखकर उससे धन, मान और प्रतिष्ठा लेना मैं पाप समझता हूं। संसार में अनेक धर्म हैं और पंथ हैं। लेकिन कोई सच्ची बात नहीं बताता। किसी भी धर्म वाले के पास जाओ, वह तुम को अपनी ओर खींचने और अपने जाल में फसाने का यत्न करेगा। यह सब भ्रम में हैं। मैं हूं समय का सन्त सत्गुरु ! क्या कहने के लिए आया हूं कि ऐ जीव ! तू अपने आप को जान और पहचान और उसे जानने और पहचानने के लिए किसी पूर्ण पुरुष की तलाश कर। तुम तो उसको गुरु मानते हो जिसका रूप तुम्हारे अन्तर में प्रकट होता है। तुम एक १० नम्बर के बदमाश को गुरु प्रसिद्ध कर दो। जो लोग उसका ध्यान करेंगे उनमें से कई आदमियों के अन्तर उसका रूप प्रकट होने लग जायेगा और वह गुरु लोगों को लूटना आरम्भ कर देगा। इसलिए मानवता मंदिर वनाने का मेरा कोई विशेष उद्देश है। जीव अज्ञानी हैं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे नाम लिखा है।

तू तो आया नर देंही में धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाकर लेजा गुरु के देशा॥
तीन ताप से जीव दुखी हैं निवल अवल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई नाम दान दे दानी॥
तेरा रूप है अदभुत अचरज तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया परम दयाल सनेही॥

मैं स्वयं निबल अबल और अज्ञानी था। अज्ञानी जीवों को भेद बताने के लिए संसार में सन्तमत आया था। लेकिन अब यह सन्तमत कुसन्तमत बन गया। कोई सच्ची बात नहीं बताता और फिर दूसरी बात यह भी है कि सचाई के जिज्ञासु भो बहुत कम हैं। लोग मेरे पास आते हैं। साधारण लोग संसारिक वस्तुओं के लिए आते हैं। परमार्थ के लिए कौन आता है? लेकिन यदि किसी का विश्वास है तो उसको संसारिक वस्तुयें भी मिलती हैं। क्या मैं देता हूं? नहीं। उनके कर्म और विश्वास से मिलती हैं और उसका श्रेय Credit बाबे फकीर को मिलता है। क्योंकि मैं सत्यप्रिय व्यक्ति हूं, इसलिए सपष्ट वर्णन करता हूं और इस झूठे श्रेय को लेना नहीं चाहता।

फूंक दिया घर लाज शरम का, काटा फन्दा नेम धरम का॥

जब यह समझ आ जाती है कि यह सब माया

है तो आदमी उस अवस्था में रहता है जो मैंने बताई है । मैं अब उस अवस्था में रहता हूं और आगे जाने का यत्न करता रहता हूं । सारा जीवन इसी खब्त में लगा रहा । पता नहीं मेरा परिणाम क्या हो ? हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दो थी कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना । मैंने जो स्वयं अनुभव किया वह कहता हूं । ग़लत है या ठीक है इसका मुझे पता नहीं । मगर मेरी नीयत साफ है । जो गुरु को आज्ञा का पालन नहीं करता वह इष्टपद को प्राप्त नहीं कर सकता ।

ज्ञान ध्यान वाचक हम छोड़ा भक्ति भाव का पहना जोड़ा ।

मैंने बड़े-बड़े ज्ञानी ध्यानि और भाषण देने वाले देखे हैं । वह ऐसे गिरते हैं कि वर्णन से बाहिर । सम्भल नहीं सकते । वाचक ज्ञान किस काम का ? किसी पूर्ण गुरु के सत्संग में जाके बात को समझो । जैसे डाक्टर के पास सब बीमारियों के लिए एक ही दवाई नहीं है, ऐसे ही साधन अभ्यास और सुख शान्ति को प्राप्त करने के लिए सब के लिए एक ही उपाय नहीं है क्योंकि हर एक जीव की प्रकृति अलग-अलग है । इसलिए मेरे मार्ग में क्या है ?

जो गुरु कहें सो हितकर मान, गुरु जो कहें सो चित धर ध्यान।

यह गुरुमत है। किसी पूर्ण गुरु से राय लो। सुनो! वाणी में स्वामी जी महाराज ने लिखा है कि गुरु को सारी बात बता दो, कोई परदा मत रखो ताकि वह तुम्हारे हालात को जानकर तुमको ठीक राय दे सके। यदि बीमार अपना सारा हाल डाक्टर को नहीं बतायेगा तो डाक्टर उसको दवाई क्या देगा। इसलिए गुरुमत से सब के लिए एक ही उपाय नहीं है। लोग कहते हैं कि गुरु अन्तरयामी होता है। अरे भोले-भाले लोगो! कुछ सोचो तो सही। यदि गुरु अन्तरयामी है तो स्वामी जी महाराज यह क्यों लिखते कि गुरु से कोई बात छपाओ नहीं।

भक्ति भाव की महिमा भारी, मानेंगे कोई सन्त विचारी।

यदि तुम अहंब्रह्म कहते रहोगे तो दूसरा जन्म लेना पड़ेगा इसलिए अपने आप को समर्पण करना पड़ता है। प्रारम्भ में बाहर के रूप का सहारा लेना पड़ता है। फिर जब प्रकाश और शब्द खुल जाये तो उनका सहारा होता है। उसके बाद परमतत्व आधार का सहारा लिया जाता है। यकदम तो कोई

वहाँ पहुंच नहीं सकता। इसलिए सन्तों ने यह साधन निकाला है कि सब से पहले किसी पूर्ण पुरुष की खोज करो, उसके सत्संग में जाओ, किसी न किसी दिन बात तुम्हारी समझ में आ जायेगी। सत्संग प्रतिदिन करो। यदि प्रतिदिन नहीं कर सकते तो छः महीने के बाद अवश्य सत्संग करो। और यदि छः महीने में भी नहीं कर सकते तो साल में एक बार अवश्य सत्संग करो, यदि एक साल में कोई एक बार भी सत्संग नहीं करता तो उसको कुछ नहीं मिलता। लेकिन सत्संग भी किसी पूर्ण पुरुष का होना चाहिए। आजकल तो गुरुलोग अपने जाल में फंसाते हैं। सचाई कौन बताता है।

सत्तनाम सतपुरुष अपारा, चौथे माहिं करे दरबारा ॥

भक्ति किसकी ? सतपुरुष की। वह सतपुरुष जो मन के चक्कर से परे रहता है। उसका पता बाहर का गुरु देता है। साधारण लोगों के लिए प्रकाश और शब्द की भक्ति है।

सुरत शब्द मारग कोई पावे। सो हंसा चढ़ लोक सधावे ॥

ध्यान योग से या सुमिरन से तुम वहां नहीं पहुंच सकते, क्योंकि सुरमिन और ध्यान मन से किया

जाता है। लेकिन सुमिरन ध्यान के बिना मन निर्मल नहीं होता। जबतक मन निर्मल नहीं है तुम आगे नहीं जा सकते। सुमिरिन भी ज़वान से नहीं मन से होना चाहिये।

सो मारग अव राधास्वामी गाई, कोई कोई प्रेम भक्ति से पाई।

जिस में प्रेम है, लगन है और कुरबानो का मादा है वह इस और आता है। पिछले समय में गुरु लोक चेलो को Test किया करते थे ताकि यह पता लग सके कि इनको इस वस्तु की आवश्यकता भी है या कि नहीं। आजकल तो प्रातः जाओ, सवा रुपया मत्था टेको। नाम ले लो और नाम धारी बनके सायं को घर आ जाओ।

जब हजूर दाता दयाल जी महाराज ने नाम प्रगट किया तो लाहौर में आर्यसमाज उनके विरुद्ध हो गई और उनके कार्यालय को आग लगा दी। उनका स्टाफ भाग गया। दूसरे दिन मैंने समाचार पत्र में समाचार पढ़ा तो मैं उनके पास आया। वह ज़मीन पर बैठे थे, आंख बन्द थी, मैंने मत्था टेका। उन्होंने आँख खोली और फरमाया। मेरा दफतर जला दिया गया और मेरा सारा स्टाफ

भगा दिया। तुम क्यों आये हो ? मैंने प्रार्थना की कि महाराज! वह लोग तो आये होंगे आपको ज्ञानी समझ कर और आपसे ज्ञान प्राप्त करने के लिए। लेकिन मैं आया हूं इसलिए कि (Love For the Sake of Love) वह उठे। अपने वाज़ू फैला दिये और मुझे छाती से लगा लिया और कहा कि फकीर! तेरे साथ निभा दूंगा।

मान वड़ाई देखकर भक्ति करे संसार।
जब देखे कोई हीनता औगन धरें गंवार॥

आजकल तो जितने अधिक चेले किसी के होते हैं उतना ही वह गुरु वड़ा समझा जाता है। यह प्रेम और लगन का मार्ग है। स्त्री के लिए सारा जीवन एक ही पति का प्रेम होता है। उसकी लगन और प्रेम काम करता है। अमृतसर क्यों प्रसिद्ध है ? एक स्त्री का पति लूला लंगड़ा और कोढ़ी था। उसको एक टोकरी में डालकर स्त्री उसको अपने सिर पर उठाये फिरा करती थी। जिस जगह अमृतसर गुरुद्वारा का सरोवर है, वहाँ एक विलकुल छोटा सा तालाब था। उसके किनारे पर स्त्रीं ने वह टोकरी रखी और स्वयं पति के खाने पीने के लिए कुछ

मांगने चली गई। बाद में उसके पति ने देखा कि कव्वे उस तलाव के पानी से नहाते हैं और काले से सफेद हो कर जा रहे हैं। उसके मन में वहाँ नहाने का विचार आया। चल तो सकता नहीं था। किसी तरह से टोकरो में से निकलकर रींगते-रींगते पानी तक पहुंच गया। जैसे ही गोता लगाया वह बिलकुल स्वस्थ हो गया। निकलकर बाहर ठोकरी के पास बैठ गया। जब स्त्री आई तो उसने पति को वहाँ न पाया और घबराई। उस आदमी से पूछा कि यहाँ मेरा पति था वह कहाँ गया। वह आदमी हंस कर कहने लगा कि मैं ही तुम्हारा पति हूं। स्त्री ने जब पहचाना तो वहुत प्रसन्न हुई। तो कहने का तातपर्य यह है कि उस स्त्री के प्रेम के जज्बे ने उसके पति को स्वस्थ किया। मनुष्य के विचार में बहुत शक्ति है। मानव का प्रेम और लगन असम्भव से सम्भव बना देता है।

मैंने जो कुछ कहा है, आप लोग जल्दी से वहाँ नहों पहुंच सकते क्योंकि जब मुझे इतना समय वहाँ तक जाने के लिए लगा यद्यपि मैं इतना अभ्यासी हूं तो मैं कैसे विश्वास करूं कि आप लोग इतनी

जल्दी वहाँ पहुंच जाओगे। इसलिए अपनी नीयत को साफ रखो और जो समय मिले सच्चे होकर अन्तर में उस मालिक से मांगा करो। मैं सदा यही मांगा करता था कि ?

Lead me to the life which thou pleasest best

ऐ मालिक मुझे उस जीवन की ओर ले चल जो मेरे लिए अच्छा है। यह मेरी प्रार्थना हुआ करती थी। तुम्हारे दिल की सफाई और सचाई ने तुम्हारी सहायता करनी है। भूल तो सभी करते हैं, मगर अपनी भूल का पश्चाताप करो। मैं स्वयं कई बार गिर जाता हूं। तुम गृहस्थी हो प्रातः उठकर अपने आप को उसके सपुरद करो। जितनी सचाई और सच्चे दिल से प्रार्थना करोगे उतना ही तुम्हें लाभ होगा।

षठ सुधरें सतसंग पाई।

एक और बात भी है। तुमने मेरा सत्संग तो एक दो घण्टे सुना और मेरी बातों का तुम पर प्रभाव पड़ा। तो जो सारा दिन और रात तुम दूसरी संगत करते हो उसका भी तो प्रभाव तुम पर

पड़ेगा । इस लिए अपनी संगत अच्छी रखो, अच्छी किताबें पढ़ो और अच्छे आदमियों का सत्संग करो और बजाय गप्पे मारने के कोई अच्छी किताब पढ़ो ताकि तुम पर अच्छा प्रभाव पड़े और तुमको लाभ पहुंचे ।

'सब को राधास्वामी'

सतसंग हुजूर परमदयाल जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर ।

दिनांक २२ जून १९७५

गुरु नाम मिला मुझको प्यारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।
सब नामों से है यह न्यारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।।

राधास्वामी । देखो दोस्तो ! यह मेरे गुरु भाई श्री दीवान चन्द जी के चेले हैं और दिल्ली से आये हैं । श्री दीवान चन्द जी हुज़ूर दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के पास क्यों गये थे, यह मुझे पता नहीं । मैं उनके चरणों में क्यों गया था ? मेरे अन्तर मैं किसी वस्तु की तलाश थी । जिसको मैं तलाश करता था । उसको मैं राम, कृष्ण, भगवान या मालिक समझता था, हुजूर दाता दयाल जी महाराज से मुझे राधास्वामीमत मिला । क्योंकि इसमें सब का खण्डन था, जिसको कि मेरा हृदय सहन नहीं

करता था । लेकिन हुज़ूर दातादयाल जी महाराज पर मेरा विश्वास टूटता नहीं था । इसलिए मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा ।

गुरु नाम मिला मुझको प्यारा, माधास्वामी, साधास्वामी ।

वह लिखते हैं कि गुरु ने राधास्वामी नाम दिया । मुझे भी राधास्नामी नाम मिला था । अब मैं सोचता हूं कि फकीर ! क्या मुंह से राधास्वामी राधास्वामी नाम जपने या मन से राधास्वामी नाम का सुमिरन करने से तुमको वह वस्तु मिल गई, जिसकी तुमको तलाश थी ? आप मेरे गुरु भाई के चेले हैं ! आपके पत्रों से सिद्ध होता है कि आप दोनों ने काफी अभ्यास साधन किया । रोशनी भी देखी, अन्तर में बाजे भी सुने । क्या इन बातों के सुनने के बाद फिर आपको किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रही ? रही । यदि न रही होती तो आप मेरे पास क्यों आते । इससे सिद्ध हुआ कि ज़बान से या मन से राधास्वामी नाम का सुमरिन करने से, प्रकाश को देखने से या अन्तर में कोई धुन सुनने से आपको यदि वह वस्तु मिल

जाती तो आपको मेरे पास आने की आवश्यकता न होता । तो फिर वह राधास्वामी नाम क्या है ? जब कभी में उस राधास्वामी नाम को सुन लेता हूं तो फिर उस समय मुझे और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रहती । वह कौनसा नाम है ?

सब नामों से है वह न्यारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।

यह नाम सब नामों से अलग वस्तु है । हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना और क्योंकि मैंने भी यह प्रण किया था कि अपना अनुभव संसार को बता जाऊंगा । इसलिए कहता हूं कि यदि हम घंटा संख के सुन लेने को, लाल रंग के सूर्य को देखने को या किसी और धुन के सुनने को नाम समझ लें, तो फिर इनके बाद हमको किसी और वस्तु की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । यदि बीन या मुरली के सुन लेने के बाद हमको किसी और वस्तु की आवश्यकता न रहे तो हम समझ लें कि यह नाम है । वसरेत्रगदाद में मैंने वहुत बीन सुनी । पण्ति पुरुषोतम दास भी वहीं थे । मैं इनके रेलवेस्टेशन पर एक बार गाड़ी से उतरा । उस समय का दृष्य मुझे

याद है । मेरे सिर मे उस समय सारा आसमान बीन से गूंज रहा था । क्या उस बीन के सुनने के वाद मैं कामी नहीं हुआ ? क्या मुझे फिर कोध नहीं आया ? आया । क्या फिर मैंने रोटी कमाने का यत्न नहीं किया ? अवश्य किया । मैं अपना अनुभव कहता हूं । लेकिन मुझे कोई दावा नहीं कि जो कुछ मैं कहता हूं यही ठीक है । जिस नाम के सुनने के बाद फिर और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रहती, वह नाम क्या है ? अपने आपसे कहा करता हूं कि फकीर ! एक दिन मर जाना है । यदि संसार को धोखा दोगे तो उस कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ेगा, उस नाम तक पहुंचाने के लिए और उस नाम को प्राप्त कराने के लिए हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे यह काम दिया था । मुझे इस नाम की प्राप्ती कैसे हुई ? जब तुम सत्संगियों ने मुझे यह कहा कि मेरा रूप तुम लोगों के अन्तर प्रकट होकर दवाइयें बता जाता है, सुरतें चढ़ा देता है, पुत्र दे जाता है और जीवों को मरते समय ले जाता है । लेकिन मैं तो होता नहीं । ऐसे ही श्री दीवान चन्द जी का रूप भी तुम्हारे अन्तर प्रकट होता होगा और तुम लोग

उनको बताते भी होंगे। क्या उन्होंने आपसे कभी यह कहा था कि मैं तुम्हारे अन्तर नहीं जाता ? गुप्ता जी ने कहा कि महाराज ! वह कहा करते थे कि यह तुम्हारा अपना ही रूप है।

जबसे मुझे यह विश्वास हो गया कि मैं तो किसी के अन्तर जाता नहीं और वह जितने रूप रंग, भाव विचार और शकलें अन्तर में पैदा होती हैं। यह जिस प्रकार के संस्कार आदमी के अन्तर मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं, वही शकलें बनाकर सामने आते हैं। तो अब मैं इन रूप रंगो को छोड़ जाता हूं। अब न सहसदल कमल मुझे खींच सकता है, न त्रिकुटी, न सुन्न न महासुन्न और न भंवरगुफा। क्योंकि मुझे यह सिद्ध हो गया कि यह सब काल और माया है या स्थूल, सूक्ष्म और कारण प्रकृति का खेल है। जहां तक मेरा अनुभव है, गलत है या ठीक है, यह मुझे पता नहीं, वह शब्द अटूट (Unbreakable) है। फिर जब वहां से मेरा उत्थान होता है और संसार में आता हूं तो क्योंकि मुझे यह ज्ञान हो चुका है कि यहां सब मन का खेल है। इसलिए मैं इस खेल में फंसता नहीं। जब तक किसी को यह ज्ञान नहीं हो

जाता कि यह जो कुछ अन्तर में प्रकट होता हैं, यह है नहीं मगर भासता हे। जिस प्रकार आपके अन्तर श्री दीवान चन्द जी का रूप प्रकट हुआ। आपने उनको बताया, तो उन्होंने कहा कि यह तुम्हारा अपना ही रूप है। लेकिन मैं कहता हूं कि यह तुम्हारा अपना रूप नहों है। यह तो तुम्हारे मन की इच्छाओं और वासनाओं का रूप है। जो रूप भी किसी के अन्तर प्रकट हाता है। वह तुम्हारे मस्तिष्क पर संस्कार पड़े हुये हैं। वह उन संस्कारों का रूप है। हमारा असली रूप क्या है ? उसमें न मन है और न मन फुरना करता है। उसमें न कोई दृष्य आता है न कोई बाजा बजता है। आदमी के अन्तर उसकी प्रकृति के अनुसार शब्द पैदा होता है। आगे न शरीर है और न प्रकृति है। तो शब्द या प्रकाश कहां से आयेगा। वह वस्तु जो प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है, वह है हमारा असली रूप। उसका न कोई रंग है और न कोई रूप है। वह अशब्द है और अप्रकाश है। सन्त उसको अकह, अपार अगाध और अनाम कहते हैं। उसके बारे न कोई कुछ कह सकता है और न कुछ बोल सकता है।

मगर वह है। क्या है ? वर्णन से बाहर है। गूंगे का गुड़ है। मैं कभी कभी वहां पहुंचता हूं। हर समय वहां नहीं पहुंच सकता। क्या आपके अभ्यास की सदा एक दशा रहती है ? नहीं रहती। प्रकृति के अनुसार अभ्यास की अवस्था बदलती रहती है। तो फिर राधास्वामी नाम क्या है ? हमारी वह अवस्था या हमारा वह रूप जो हमारे शरीर में रहता हुआ हमारे अन्तर के हर प्रकार के रूप रंग, प्रकाश और ब्द का साक्षी है। वह है हमारा असली रूप। जब वह वस्तु शरीर में आ जाती है, तो शरीर के जितने चक्कर हैं अर्थात छे चक्कर पिण्ड के, छे चक्कर मन के और छे चक्कर दयाल देश के। वह इन सब की साक्षी बन जाती है। हमारा असली रूप न प्रकाश है और न शब्द हैं। हम अपने रूप को भूलकर शारीरिक और मानसिक बोध-भानों को सत मानते हैं। इसमें हम खुशी लेते हैं, आनन्द लेते हैं, निर्भय भी हो जाते हैं और दूख भी सहते हैं। राधास्वामी नाम क्या है ? अनुभव और सार ज्ञान का नाम "राधास्वामी नाम" है। राधा-स्वामी दयाल ने सुरत शब्द योग के बारे यूं फरमायाहै।

राधा आद सुरत का नाम, स्वामी आद शब्द पहचान।

और फिर लिखते हैं ।

सुरत शब्द दोऊ अनुभव रूपा, तू तो पड़ा भरम के कूपा ।

नाम न शब्द है न प्रकाश है और न शारीरिक बोधभान हैं । नाम है हमारा अपना आप । जो इस शरीर में रहता हुआ हर प्रकार के बोधभानों को महसूस करता है । क्योंकि हमको अपने रूप का ज्ञान नहीं है । इसलिए हम बोधभानों में आकर सिद्धि शक्ति में या मस्ती में आ जाते हैं । अपने रूप के ज्ञान का नाम राधास्वामी नाम है ।

दल सहस कमल सुमरिन साधा, त्रिकुटी चढ़ ध्यान को अराधा।

सहस दलकमल क्या है ? हज़ारहा पखंडियों वाला फूल । यह हमारा मन है । इसमें से ही हजारों प्रकार की वृत्तियें और बिचार धारायें निकलती हैं, इसको अजपाजाप से साधा जाता है । फिर मन अनेक प्रकार के विचार नहीं उठाता और केवल एक ओर लग जाता है । इस स्थान में घंटा बजता है । क्यों ? जैसे हम बाहर में भिन्न धातें मिलाकर घढ़-याल बना लेते हैं और जब उस पर हथोड़ा मारते हैं तो घंटा बजता है । ऐसे ही जिस आदमी के अन्तर में स्थूल पदार्थ की वासनायें होती हैं और अजपाजाप

के समय वह इकट्ठी हो जाती हैं तो वहां घंटा बजेगा और यदि किसी के अन्तर स्थूल पदार्थ की इच्छा नहीं हैं तो उसके अन्तर घंटा नहीं बजेगा। सन्तों ने कह तो दिया कि अन्तर में घंटा बजता है, मृदंग की आवाज़ होती है और बादल गरजता है। लेकिन यह किसी ने नहीं बताया कि अन्तर में यह आवाजें क्यों पैदा होती हैं। मैं संसार में समय के सन्त सत्गुरु के रूप में इस भेद को खोलने के लिए आया हूं। मैं अब यदि घंटा संख मृदंग आदि को अपने अन्तर में सुनने का यत्न भी करूं तो भी नहीं सुन सकता। क्योंकि मेरे अन्तर में अब स्थूल पदार्थ की वासनायें नहीं हैं। देखो! एक बात ध्यान से सुनो। जब यह सुमरिन बन जाता है और मन एकाग्र हो जाता है तो यदि उसको सत्संग में संसार के परिवर्तनशील होने का अर्थात संसार के नाशवान हौने का विश्वास नहीं कराया जाता, तब तक वह सहस दल कमल से आगे नहीं जा सकता। इसलिए जहां नामदान की महिमा है वहा सत्संग की भी महिमा है ताकि जीव को काल और माया का पता लग जाये। इसके बाद आगे चलता है।

इससे आगे है त्रिकुटी। त्रिकुटी में गुरु स्मरूप का ध्योन होता है । ध्येय, ध्याता और ध्यानी। त्रिकुटि में लालरंग का सूर्य चमकता है और गुरु स्वरूप दिखाई देता है। वहां की आवाज़ को बादल की गरज या मृदंग की आवाज कहा जाता है। मृदंग क्यों बजता है ? वहाँ कोई बाजा तो है नहीं। जब स्थूल वृत्तियें समाप्त हो जातो हैं तो फिर सूक्षं वृत्तियें आती हैं और वह त्रिकुटी के स्थान पर इकट्ठी हो जाती हैं और उसका फिर बादल बन जाता है और बादलो की आपस की रगड़ से आवाज़ पैदा होती है, ऐसे ही जब त्रिकुटी के स्थान पर ध्यान की शक्ति से सूक्षं वृत्तियें इकट्ठी हो जाती हैं तो इनकी आपस की रगड़ से जो आवाज़ पैदा होती है वह बादल की गरज से मिलती जुलती है। उसको ओं ओं या बम बम भी कहते हैं। ओं क्या है ? उत्पत्ति स्थिति और परलय। मन के बिचार ही ग्रह्मा विष्णु और महेश हैं अर्यात संकल्प उठता है, यह ब्रह्मा है, संकल्प ठहरता हैं, यह विष्णु है और संकल्प नाश हो जाता है यह महेश है । इस स्थान पर लाल रंग क्यों पैदा होता है ? जब तुम ज़ोर से किसी वस्तु को पकड़ते

हो तो तुम्हारा ज़ोर लगता है और तुम्हारा मुंह लाल हो जाता है ऐसे ही अभ्यास के समय भी जोर लगता है और सूक्ष्म वृत्तियां थिर हो जाती हैं तो लाल रंग पैदा हो जाता है।

सुन्न महासुन्न दुचिता जारा, राधास्वामी राधास्वामी।

जब आदमी इससे आगे चलता है तो फिर दुचिताई आ जाती है अर्थात दो विचार हो जाते हैं। यह विचार ठीक है या यह ठीक है। इसका नाम दुचिताई है। इस स्थान पर आदमी का मन गुरु स्वरूप में लय हो जाता है और मस्ती आ जाती है और मस्ती के कारण गुरुस्वरूप समाप्त हो जाता है। गुरुस्वरूप त्रिकुटी तक ही रहता है। सुन्न में गुरुस्वरूप नहीं होता। यूं भी तुम बाहर में एक जगह कोई निशान लगाकर बिना आंख झपके उसकी ओर देखते रहो। वह कुछ देर के बाद लोप हो जायेगा। जब गुरुस्वरूप का पूरा ध्यान बन जाता है तो गुरुस्वरूप लोप हो जाता है। इस अवस्था का नाम महासुन्न है। क्योंकि इस अवस्था में मन संकल्प छोड़ देता है। इसलिए वहां दुचिताई समाप्त हो जाती है। शास्त्रों के अनुसार ओं का बिन्दु वह स्थान है जहां मन

संकल्प नहीं करता और समाधि का नाम सविकल्प समाधि है और उस अ स्था का नाम महासुन्न है। बानी में आया है कि वहां चार स्थान गुप्त हैं और वहाँ अंधेरा होता है और कोई सन्त उन गुप्त स्थानों को खोल नहीं सकता। वह चार स्थान क्या हैं ? मन चित, बुद्धि अहंकार। अब इसका अर्थ समझो। महा-सुन्न में मन काम नहीं करता और अफुर हो जाता है अर्थात मन वहां कोई फुरना नहीं करता। जब मन ही अफुर हो गया, खोलने वाली वस्तु ही न रही तो खोलेगा कौन और किसको खोलेगा ? सन्तोंने लिख तो दिया। लेकिन बात को समझाया नहीं।

सुरत शब्द जोग मत अति है सुगम, कोई अधिकारी पाता है गम।

सुरत शब्द योग है, सुरत से शब्द को सुनना और यह दसवें द्वार से आगे आरम्भ होता है। विचले शब्द मन से सुने जाते हैं । रारंग सारंग क्यो बजता है ? जैसे सितार बजाने वाला जब सितार की तारों को खींचकर उनके ऊपर गज़ फैरता है तो उन तारों में से आवाज़ पैदा होती है। ऐसे ही जब अभ्यास के समय मन की वृत्तियाँ खिच जाती हैं। और सुरत उनके ऊपर चलती है तो एक आवाज़

पैदा होती है, जिसका नाम सन्तों ने रारंग सारंग रखा है । सन्तमत प्राकृतिक (Natural) मत है ।

गुरु ने मुझे दिया मरम सारा, राधास्वामी राधास्वामी ।

बाहर का गुरु करता क्या है ? भेद और मरम देता है और असलीयत बताता है । मैं कई बार अपने आपको (Curse) करता हूं कि तुम अपने आपको समय का संत सत्गुरु कहते हो, क्या तुम अहंकारी नहीं ? नहीं । मैं भेद और सार देता हूं ताकि जीव असलियत को समझ जायें और जगह जगह भटकते न फिरें । गुरु का काम है, भेंद देना और असलियत बताना । मगर लोग इसके अधिकारी नहीं हैं । मैं ज़ब बाहर दौरे पर जाता हूं तो लोग मुझसे अपने छोटे बच्चों के बाल कटवाने के लिए उनको मेरे पास ले आते हैं और मुझे नाई बना लेते हैं । परमार्थ के लिए या सुरत शब्द योग के लिए मेरे पास कौन आता है । सुरत शब्दयोग तो उनके लिए है जो अपने आद घर जाना चाहते हैं और जिसको संसार की इच्छा नहीं है ।

विषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन संतान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे ।।

लेकिन आजकल तो गुरु लोगों ने यह नाम दान एक रोजी का साधन बना रखा है । जो भी आया नाम, जो भी आया नाम । अपने चेलों की संख्या बढ़ाई जा रही है : फिर भी धन्य हैं कि जीवों को संस्कार मिल रहा है ।

जगमग जगमग ज्योति दमकी, ज्योती विचित्र घट में चमकी ।

महासुन्न के बाद जो रोशनी होती है, वह हमारे आत्मा की रोशनी है । इससे पहले जो रोशनी है वह मन की है । सहसदल कमल में पीले रग की रोशनो होती है । यह पृथ्वी का रंग है । तुम किसी वस्तु का बीज बौ दो, जब उसका अंकुवा धरती से बाहर आयेगा, तो उसका रंग पीला होगा ।

हुआ मगन जो देखा चमकारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।

जब मन की रोशनियाँ समाप्त हो जाती हैं तो फिर आत्मा का रूप आता है । आत्मा की रोशनी सफेद होती है मगर उसमें मामूली सा नीलापन होता है । इसलिए कृष्ण जी का रंग सांवला बताया जाता है । क्योंकि वह आत्मा है ।

दल सहस कमल घंटा बाजा. और शून्य में रारंग धुन गाजा।
त्रिकुटी में गरजा ऊंकारा राधास्वामी. राधास्वामी॥
ब्रह्मांड की थी यह त्रिलोकी, यह त्रिलोकी मैंने छोड़ी।
चौथे पद सुरत को है गारा. राधास्वामी. राधास्वामी॥

यद्यपि मुझें दावा किसी बात का नहीं, मगर यह मेरी खोज है। सात वर्ष की आयु से इस ओर आया था। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि शिक्षा को बदल जाना। अपने कर्म भोगवस अपना अनुभव बता रहा हूं। शरीर, मन और आत्मा त्रिकुटी है। यह तोन अवस्थायें हैं। वह फरमाते हैं कि मैं इनको छोड़ गया। असली नाम इनसे परे है। यह जितने निचले नाम हैं, यह सब प्राकृतिक हैं। चौथा पद क्या है ? इसको वर्णन करने के लिए शब्द नहीं मिलते। तीनों मंजलों को छोड़ जाने के बाद अपना रूप आता है। मगर इसमें भी कोई शकल मौजूद है, जिसको सतलोक कहते हैं।

चौथे पद नाम की धुन पाई, प्यारी धनु मुझको भाई।

चार धुन क्यों सुनाई देती हैं ? सुनो। १-रा २-धा ३-स्वा ४-मी। जो आदमी रा धा स्वा मी राधास्वामी का सुमरिन करता हुआ शरीर को त्याग

देगा । उसके मस्तिष्क में चार अवस्थाओं का संस्कार जायेगा । इस संस्कार के कारण उसको चार धुन सुनाई देंगी । राधास्वामी नाम तो बाद में निकला है। कबीर साहिब के समय में तो राम नाम था । वह जब वहां पहुंचते थे तो उनको चार धुन सुनाई नहीं देती थी ।

सुनो उसे भंवर पद से पारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।
सतलोक में बीन की गति प्रकटी, निरखो वहां सतगुरु की भृकुटी ॥

जब आदमी शारीरक और मानसिक बोध भानों को भूल जाता है तब उसको बीन की धुन सुनाई देती है । उस धुन में खुशी आनन्द और मस्ती होती है । यही बात हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज ने रसाला "सारी दुनियां" में सतलोक के बारे कही थी कि वहाँ आनन्द खुशी और मस्ती होती है । अभ्यासी शक्ल से ही पहचाना जाता है । अभ्यासी के मुख (चेहरे) पर सदा नूर होता है चाहे वह बीमार ही क्यों न हो ।

जिन को कन्त मिलाप है, तिन मुख वरसत नूर ।

मैं जब समाधि से उठता हूं तो उस समय मेरे चहरे की दशा और होती है। ऐसे ही और अभ्यासयों

की भी होती है ।

सतगुरु मेरे हो गये रखवारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।

उस स्थान पर पहुंच जाने से सत्गुरु मिल जाता है। सत्गुरु नाम है सच्चे ज्ञान, सच्ची समझ और सच्चे विवेक का, सत्गुरु आदमी का नाम नहीं है। संसार भूला हुआ है। सच्चा ज्ञान और सच्ची समझ आदमी की रक्षा करती है। लोग अपने विचार से मुझे बना लेते हैं और मेरा रूप उनकी सहायता कर जाता है। मैं तो होता नहीं। लेकिन लोग जो समझ और ज्ञान मुझ से ले जाते हैं, वह उनकी सहायता करते हैं। उनको चिन्ता नहीं आती। उनको किसी के मरने का शोक नहीं और किसी के पैदा होने की खुशी नहीं। लेकिन व्यवहारिक जीवन में और लोक लाज के लिए संसार में रीति रिवाज के अनुसार चलना पढ़ता है। गुरु सच्चाई, भेद और मरम बताता है।

लख अलख की शोभा वहु न्यारी, गम अगम की महिमा थी प्यारी।

इससे आगे अलख अगम और अनाम है। वहां साधन करता हूं। मगर अभी तक मेरा वह साधन

परिपक्व नहीं हुआ । वह क्या है ? सुनो । सुरत चेतन स्वरूप को तलाश करती हुई जब आगे जाती है तो आगे न प्रकाश दिखाई देता है और न शब्द सुनाई देता है । क्योंकि आगे कुछ दिखाई नहीं देता । इसलिए वह अलख है । क्योंकि उसका कुछ पता नहीं लगता और उसकी कोई गम नहीं मिलती, इसलिए वह अगम है । आगे हस्ती समाप्त हो जाती है, इस लिए वह अनाम है । बुलबुला जब टूट गया तो खेल समाप्त हो गया और "मैं" जहां से आई थी वहीं आकर अपने भंडार में मिल गई और अपना वजूद समाप्त कर गई ।

ऊचे चढ़ हो गया भव पारा, राधास्वामी, राधास्वामी ।

अभ्यास करते २ ऊंचा चढ़ गया और भव से पार हो गया । अर्थात सत अलख और अगम से पार हो गया । शारीरिक मानसिक और आत्मिक हैपने का नाम ही भव है । जब आदमी आगे चला जाता है तो क्या होता है ? चराग गुल और पगड़ी गायब, न मुज़ारह न माज़ी, न मुफती न काज़ी । मैं असलियत को जानना चाहता था । इसलिए हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे यह काम दिया था । ऊंचे से

ऊंचे स्थानों का आनन्द लेना भी भव है। कोई भव अच्छा है और कोई भव बुरा है। इसलिए सन्तों ने यह उपाय निकाला है कि सब से प्रेम करो, नेकी करो, परोपकार करो और अपने जीवन को अच्छा बनाओ। सन्तों का मार्ग प्रेम और भक्ति का मार्ग है ताकि संसार में सुख भी लो, आत्मानन्द भी लो और पार भी हो जाओ। इसलिए कहा गया है।

लोक अलोक पाऊ सुख धामा।
चरन शरन दीजिईये विशरामा॥

जो आदमी सन्तमत को समझकर रागमार्ग में चलता है उसका व्यवहार बुरा नहीं होता। देखो! मैं हर प्रकार से सुखी हूं। यदि मेरे पास धन एकत्र नहीं है लेकिन मैंने किसी का देना भी नहीं है। जीवन बड़े आराम से व्यतीत हो रहा है। यह है साधन का उद्देश्य।

गुरु नाम की धुन पहचान लिया, प्रकाश में रूप को जान लिया।
मिल गया काल से छुटकारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥

नाम का पता लग गया। जो वस्तु प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है, वह हमारा अपना रूप है।

काल है समय और समय में गति होती हैं। जब तक गति है तव तक काल से छुटकारा नहीं। जिस प्रकार गहरी नींद में आदमी को कुछ पता नहीं होता ऐसे हो समाधि के समय जिसकी सुरत ऊपर चली जाती है, उसको कोई पता नहीं होता। उसको उस समय न चिन्ता न फिकर न रंज और न गम। कोई परवाह नहीं होती।

राधास्वामी राधास्वामी. राधास्वामी में गाता हूं।
मैं तरा साथ सब को तारा, राधास्वामी राधास्वामी ॥

राधास्बामी का गाना क्या है ? वह ज़वान से गाने वाला गाना नहीं हैं। मगर किसी सीमा तक यह भी ठीक है। मैं जो समझता हूं वह यह है कि मैं तुम सत्संगियों के कारण तर गया। तुम्हारे कारण मेरा बेड़ा पार हो गया। अब मैं ऊंचा जाता हूं और सोचता हूं कि फकीर ! यदि तुम अगम के वासी हो गये हो तो क्या तुम कुछ कर सकते हो ? अच्छा मैं न सही। क्या दूसरे सन्त कुछ कर सकते हैं ? क्या पिछले सन्त कुछ कर सकते थे ? यदि वह कुछ कर सकते होते तो वह अपनी बीमारी को दूर कर लेते। अपने घरेलू झगड़ों को दूर कर देते, लेकिन वह न

कर सके। उनके लड़के मरे, लेकिन वह कुछ न कर सके। उनकी अपनी जो दशा हुई वह आप सब को पता है। तो फिर क्या सिद्ध हुआ कि वह एक (Supermost Element) है, उसको कोई जान नहीं सकता। क्योंकि उसको कोई जान नहीं सकता इस लिए सन्तों ने उसको अकह, अपार, अगाध और अनाम कह दिया। मैं इस परिणाम पर आया हूं कि वह एक तत्व है। उसमें हिलोर होती है। प्रकाश और शब्द पैदा हो जाते हैं। संसार बन जाता है। सूर्य चान्द सितारे और लोक लोकान्तर बन जाते हैं। किसी ने उसका अन्त नहीं पाया। तो फिर मैं क्या हूं? चेतन का एक बुलबुला। उसकी मौज से बना। इसमें एक "मैं" आ गई। उसकी मौज से यह खेल खेलता है और अज्ञान में आकर चक्कर काट रहा है। जब ज्ञान हो जाता है तो तलाश समाप्त हो जाती है और शान्ति मिल जाती है। फिर वह आदमी कोई परिश्रम नहीं करता। राधास्वामी मत का लक्ष्यपद ही शान्ति है। मुझे तो इस ज्ञान से शान्ति मिली। आप लोग आये हैं मैंने अपना अनुभव बता दिया। जब आरम्भ मैं मैं हजूर दाता दयाल जी महाराज को लगातार

हर सप्ताह एक पत्र लिखता रहा तो उन्होने दस महोने के बाद उत्तर में मुझे लिखा कि फकीर ! मुझे तुम्हारे पत्र मिलते रहे हैं। मैं तुम्हारे प्रेम का सत्कार करता हूं। मैंने राधास्वामीमत मैं हजूर महाराज जी की पवित्र विभूति से असलियत हकीकत सच्चाई और शान्ति प्राप्त की है। यदि तुमको इस मार्ग पर चलने से कोई इन्कार न हो तो तुम लाहौर आकर मुझे मिल सकते हो। उस समय मुझे समझ नहों आती थी। अब मुझे क्या मिला ? शान्ति।

मैं तरा साथ सब को तारा, राधास्वामी, राधास्व मी।

तरना क्या है ? आदमी जब पानी में तैरता है तो उसका शरीर पानी में होता है। वह हाथ पांव मारता हुआ पानी से पार हो जाता है। ऐसे ही जीवन में सुख आनन्द बेआनन्दी खुशी और गमी से पार होते हुये इस भव में न बहना और अपने सिर को ऊंचा रखना ही तैरना है। सत्संग से आदमी को ज्ञान हो जाता है तो फिर वह संसार में रहता हुआ अपने आपको संसार से अलग समझता है और संसार में फंसता नहीं।

आप कहते हैं कि दीवान चन्द जी चले गये और

रोया, तो क्या अन्तर है दोनों में ? दोनों ही मोह में हैं। मैं कहा करता हूं कि मेरे चोला छोड़ने पर यदि कोई आदमी रोयेगा तो उसने मेरी शिक्षा को नहीं समझा।

गुरु को मानुष जानकर, भेड़ की चलते चाल।
वह बन्धन को क्यों तजें, व्यापे माया काल। योनी की खानी

इसलिए गुरु को बाबा फकीर या श्री दीवान चन्द मत समझो। हां ! उनकी बाणी गुरु है।

बानी गुरु गुरु है बानी, बानी अमृत सारे।

हजूर महाराज राय साहिब जी महाराज ने अपनी प्रेम बाणी में लिखा है कि अन्त समय फिल्म चलती है। गुर भी आ जाता है और दर्शन होते हैं। यह वैसे ही दर्शन होते हैं जैसे तुम स्वप्न में दर्शन करते हो। मौत भी एक लम्बा स्वप्न है। कुछ समय तक उस जीव का सूक्ष्म शरीर ऊपर के लोकों में रहता है। फिर जब कोई सन्त सत्गुरु इस संसार में आता है तो वह जीव भी यहां आकर जन्म लेता है और उस सन्त सत्गुरु के सम्पर्क में आकर बाकी कमाई पूरी करके अपने आध घर पहुंच जाता है। अब आप देखो कि उन्होंने कितनी सचाई बताई है।

लेकिन आजकल गुरु लोग क्या करते हैं ? नाम ले लो, तुमको तुम्हारे अन्त समय पर गुरु आकर ले जायेगा। कितना धोखा है। लेकिन एक तरह से यदि देखा जाये ता यह धोखा भी नहीं है। निवल अवल अज्ञानी जीवों को एक सहारा है। लेकित असलियत नहीं है। यह सहारा भी धन्य है क्योंकि इस से भी अज्ञानी जीवों के मन को शान्ति मिलती है।

गुरु नाम आदर्श का, गुरु है मन का इष्ट।
इष्ट आदर्श को न लखे, समझो उसे कनिष्ट॥
बात बूझे मन मानी।

गुरु आईडियल है और आदर्श है। माँ के लिए बच्चे के दिल में कभी बुरा बिचार नहीं आता, क्योंकि माँ उसका इष्ट है। लेकिन दूसरा आदमी जो उस स्त्री को अपनी पत्नी समझता हूं। वह उस स्त्री को बुरा भला भी कह देता है। स्त्री तो एक ही है लेकिन उसके लिए भाव सबका जुदा जुदा है। इस लिए गुरु आईडियल है।

गुरु भाव घट में रहे, अघट सुघट की खान।
जिसे समझ ऐसी नहीं वह है मूढ़ समान॥
नहों गुरु रूप पिछानी॥

चेला तो चित में रहे. गुरु चित के आकाश ।
अपने में दोनों लखें. वही गुरु का दास ।।
रहे गुरुपद घट ठानी ।।

कबीर साहिब ने एक जगह लिखा है ।

एक तरवर दो पंछी बैठे, एक गुरु एक चेला ।
चेले को तो धर धर खाया, गुरु निरन्तर खेला ।।

हमारे मन में प्रश्न करने वाला चेला है और उत्तर देने वाला गुरु है । उत्तर तो तुम्हारे ही अन्तर में है । अपने भ्रम और अपने अज्ञान को मिटाने के लिये बाहर का गुरु धारण किया जाता है । असली और सच्चा सतगुरु तो तुम्हारे अपने ही अन्तर में मौजूद है और वह है तुम्हारा अपना ही रूप ।

सुरत शिष्य गुरु शब्द है, शब्द गुरु का रूप ।
शब्द गुरु की परख बिन, डूबे भरम के कूप । नर जन्म गवांनी

शब्द और सुरत एक बाहर में हैं । जैसे अब मैं बोल रहा हूं, यह शब्द है और तुम सुन रहे हो यह सुरत है । एक शब्द और सुरत अन्तर में हैं । जो ऐसा नहीं समझता वह भ्रम में है ।

गुरु ज्ञान का तत्व है. गुरु ज्ञान का सार ।
गुरु मत गुरु गम जा लखे, फिर न भव भय भार ।
कमल जैसी गति आनी ।

हजूर दाता दयाल जी का क्या भाव है। यह तो वही जानते होंगे। जिस ज्ञान से मेरा भव पार हुआ, वह यह है कि मैं चेतन का एक बुलबुला हूं। यह मालिक की सृष्टि है। इसमें जो कुछ हो रहा है, यह सब उसका खेल है और उसकी मौज है। इस ज्ञान से मुझे शान्ति मिली। मैं यह गुरु ज्ञान समझता हूं। कई कहते हैं कि हम ब्रह्म हैं, कोई कहता है कि में अलख हूं, अगम हूं और कोई अपने आप को अनामी कहता है। मैं पूछता हूं कि यदि तुम अलख अगम और अनाम में भी पहुंच गये तो तुम क्या बन गये और तुम क्या कर सकते हो ? जो कुछ किसी को मिला, वह उसके कर्म का फल मिला। लोग अपने विश्वास से मेरे पास से प्रसाद ले जाते हैं और ठीक हो जाते हैं। लेकिन मेरी स्त्री साढ़े छः साल बीमार रही। मैंने क्या कर लिया ? जिन स्त्रीयों के संतान नहीं है। वे अपने विश्वास से मुझ से प्रसाद ले जाती हैं। लगभग दो सौ स्त्रीयों को लड़के हुये लेकिन मेरी लड़की के विवाह को २०-२२ साल हो गये। मैंने कई वार उसको प्रसाद दिया है। उसके कोई बच्चा नहीं है। तो क्या मैं कुछ करता हूं ? मेरी तो आंख

खुल गई। मेरी तरह साफ कहने का दस्तूर नहीं था क्योंकि साफ कहने से दायरा नहीं बनता और अज्ञानी जीवों को सहारा नहीं मिलता। इसलिए मैंने जो समझा वह कहा। यदि मैं गलती पर हूं तो मैं दोषी नहीं हूं। हुजूर दाता दयाल जी महाराज और हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज, जिन्होंने मुझे यह काम दिया था, उनकी भी तो आंख थी और वह जानते थे कि यह सच्चा आदमी है और भाँडा फोड़ देगा।

राधास्वामी सतगुरु सन्त ने, कही बात समझाय।
जो नहीं माने बचन को, उरझ उरझ उरझाय।
कौन समझे यह वानी॥

राधास्वामी सत्गुरु ने बात समझा दी। मैं कहता हूं कि राधास्वामीमत वालों ने संसार को सुरझाने की बात नहीं कही बल्कि उरझाने की बात कही है। वह भी सच्चे हैं। क्योंकि जीव तो आते ही उरझने के लिए हैं। सुरझने के लिए कौन आता है।

अपने उरझे उरझियां, उरझे सब संसार।
अपने सुरझे सुरझियां, यह गुरु ज्ञान विचार।

आदमी स्वयं ही उरझता है और स्वयं ही

सुरझता है । जब कोई सत्गुरु मिल जाता है, तब सच्चा ज्ञान और सच्चा भेद मिलता है । यदि मेरे सत्संग से किसी की बुद्धि साफ नहीं होती तो मैं दोषी हूं । तो मेरे सत्संग में एक बार तो आदमी को बात का विश्वास हो जाता है । इसके बाद यदि वह अमल न करे तो फिर मेरा दोष नहीं । इसलिए मैं कहता हूं कि गुप्ता साहिब ! आप का मार्ग ग़लत नहीं है । मैं यह नहीं कहता कि मुझे पूजो । मैं एक डिब्बे की मुर्गियों को निकालकर दूसरे डिब्बे में बन्द करना नहीं चाहता । आपका मार्ग ठीक है । केवल अनुभव और ज्ञान की आवश्यकता है । आपने बहुत अभ्यास किया है । अभ्यास की अवस्था प्रकृति के अनुसार बदलती रहती है । मगर अनुभव, ज्ञान और निश्चयात्मिक बुद्धि नहीं बदलती । आप आये मुझे वहुत खुशी है । मैं तो हजूर दाता दयाल जी का सेवक हूं । उन्होंने मुझे आज्ञा दी थी कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना । मैंने बदल दी । मैंने इस स्थान का नाम रुहानी सत्संग नहीं रखा, वल्कि "मानवता मंदिर" रखा है । आध्यत्मिकता के अधिकारी बहुत कम हैं । साधारण

जनता के लिए मैंने "मनुष्य बनो" की आवाज़ उठाई है। क्योंकि आप परमार्थिक दृष्टि से मेरे पास आये हैं। इसलिए मैंने जो समझा बता दिया।

"सबका राधास्वामी"

सगुण

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चन्डीगढ़

निर्गुण को क्या तारीफ है ? निर्गुण किसे कहते हैं ? यह एक प्रश्न है । निर्गुण और सगुण में क्या भेद है । निर्गुण का अर्थ है गुण से रहित । गुण से रहित तो सगुण ही हो सकता है । इसलिए यदि उपासना करना चाहते हो, तो सगुण की करो । उपासना उस सगुण की ही हो सकती है । भक्ति सगुण की करो । सेवा सगुण की की जा सकती है । ध्यान जब होगा सगुण का होगा । सगुण की संगत से ज्ञान मिलेगा, अनुभव खुलेगा, प्रकाश होगा । शब्द से शब्द पैदा होता है । यदि आप अपने जीवन की गुत्थी सुलझाना चाहते हैं तो किसी सगुण महा-पुरुष का सत्संग करो ।

आपने अपना इष्ट बनाया हुआ है । बड़ी अच्छी बात है । उस इष्ट को सबसे ऊंचा मानो । इसको

परमतत्व मानो। सर्वाधार मानो। यदि आप अपने इष्ट फो किसी सगुण रूप में मान सकते हो तो काम जल्दी, बन ज़ायेगा। शर्त है कि सगुण रूप जीवित हो पूर्ण हो, शब्द स्वरुपी हो। आपका इससे प्रेम हो सके। इसके पास बैठने से शान्ति मिले। मन को आनन्द मिले। अंगहीन न हो। इसकी आँखों में प्रकाश हो। मुँह पर तेज टपकता हो और इसमें यह गुण हों कि आप समान कर ले। आज़ाद कर दे। विचार ऐसे शुद्ध कर दे कि अध्यात्मिकता पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाये।

यह नियम है। जैसा आपका इष्ट होगा वैसे आप हो जाओगे। यदि सगुण की उपासना करोगे तो उस महापुरुष में जो २ गुण या अवगुण होंगे आप बिना जाने ग्रहण कर लोगे। बल्कि मैं तो यह कहूंगा इसकी शकल और उसकी आदत आपकी बन जायेगी। आप ऐसा महसूस करने लग जाओगे। यह बिल्कुल सच्ची २ बात कह रहा हूं। भक्त और भगवन्त में कोई अन्तर नहीं होता। "गुरु कर लें आप समान' शब्द ठीक है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

आपनें कीट भृंगी की कहानी सुन रखी होगी।

यह कहानी नहीं है बल्कि सच्चाई है। यह प्रकृति की व्यवस्था है। भृंगी एक लाल रंग की बड़ी मक्खी होती है। जो मिट्टी का घरौना दीवार पर बनाया करती है। यह इसका काम है। इसके सन्तान नहीं होती। न यह नर है न मादा। लेकिन प्रकृति ने संतान का जनून इसके अन्तर भर रखा है।

घरौना बना लेने के बाद यह एक साधारण काले रंग के कीड़े को पकड़ कर ले आती है और अपने घरौने में बन्द कर लेती है और कीड़े को डंग मार देती है। कीड़ा डर से इसकी याद करता रहता है। बाहर निकल नहीं सकता याद में वह भृंगी की शकल धारण कर लेता है। कीड़े के पर निकल आते हैं। घरौने में सुराख करके उड़ जाता है। फिर भृंगी का यही काम जारी रहता है।

सुमरिन सों मन लाईये, जैसे कीट भृंग।
कबीर बिसारे आप को, हो जाय यहती रंग।
गुरु और पारस में यही अन्तरो जान।
पारस लोहा कंचन करे। गुरु करले आप समान।

क्या आप देखते नहीं हो कि शराबी के पास बैठने से शराबी बन जाते हैं। चोर की संगत से चोरी

आ जायेगी। कातल की संगत से ज़ालम हो जाओगे। यदि आप दानी की संगत करोगे तो दानी बन जाओगे। डाक्टर के पास बैठने से दवाईयों का ज्ञान हो जायेगा। औफीसर के पास बैठने से हकूमत का ज्ञान हो जायेगा। इंजीनियर के पास बैठने से कारी-गर हो जाओगे।

यदि आप के सामने निम्बू काटकर इसपर नमक डालकर खाया जाये तो क्या आपके मुंह मैं पानी नहीं आयेगा ? अवश्य आयेगा। संग दोष अनिवार्य है। सत्संग का प्रभाव हुये बिना नहीं रह सकता। प्राकृतिक नियम को कोई टाल नहीं सकता।

इसलिए ऐ प्राणी ! सोच समझकर अपनी संगत करना। आपके जीवन का आधार आपकी संगत पर आधारित है। जिस ढ़ाचे में चाहो, अपने जीवन को ढाल लो। इसलिए ऐ प्राणी ! होशियार होकर इस संसार में विचरना। तुम्हारा मन तुम्हारा संगी और साथी है। अपने मन को गुरु रंग में रंग दे। इसी में कल्याण है।

जब अभ्यासी अपने इष्ट का ध्यान सगुण रूप में करता है। आंखें अपने आप बन्द हो जाया करती

ऐ दाता ! आपका एहसान संसार के दुखों से घबराया हुआ अशान्त था। सुख और शान्ति की तलाश में मेरे कर्म या आपकी मौज मुझको आपके चरणकमलों में ले गई। आपने जो मुझ पर दया की लाख प्रयत्न करूं, चुका नहीं सकता। जो कुछ आपने दिया उसको अपने निजी अनुभव के आधार पर पूरा कर चला। अब प्रार्थना है कि अपनी ज़ात में मिला ले।

फ़कीर

'मानवता मन्दिर होशियारपुर में आँखों के मुफ्त इलाज के लिए हस्पताल में डाक्टर की आवश्यकता

मैंने अपने कर्म भोग वश और हजूर दाता दयाल महर्षि शिववृत लाल जी की पवित्र विभूति के आदेशानुसार कि शरीर त्यागने से पहिले शिक्षा को बदल जाना, मानवता मन्दिर की आधार शिला रखी, क्योंकि बिना केन्द्र के काम नहीं चलता ! क्योंकि मैं स्पष्ट और सत्य प्रिय हूं और संसार वाले सच्चाई के इच्छुक नहीं होते । संसार दुख और दृद्रिता से परेशान होता है और वह सन्तों फकीरों के पास या मन्दिर मसजिदों में जाता है । इसलिए कर्म भोग वश मैंने जहाँ हौम्योपैथिक, Dental Hospital ,ज्योतिष आदि या साधन अभ्यास का प्रबन्ध किया वहां आखों का मुफ्त हस्पताल (Free Eye Hospital) खोल रहा

हूं जिसके लिए इमारत बन रही है। इस हस्पताल के लिए एक डाक्टर जो आंखों के इलाज और औपरेशन में निपुण हो, की आवश्यकता है। फकीर लाईबरेरी चैरीटेबलट्रस्ट के पास इतना बड़ा वेतन देने के क्षमता नहीं इसलिए इस लेख द्वारा कहना चाहता हूं कि यदि कोई सज्जन जो इस कार्य में निपुण हो और जनता की निष्काम सेवा करना चाहता हो तो वह मन्दिर के सैक्रेटरी साहिब से पत्र व्यवहार करे। ट्रस्ट रहने के लिए मकान दे सकता है। बाकि वेतन आदि के वारे में पत्र व्यवहार द्वारा या स्वयं मिलकर तय किया जा सकता है। यदि कोई रिटायर्ड डाक्टर इस शुभ कार्य के लिये अपनी सेवायें प्रस्तुत करे तो बहुत अच्छा होगा।

आपका

फकीर

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

हैं । सगुण रूप अन्तर प्रकट हो जायेगा । ध्यान पक्का हो जाने पर सुरत ऊपर को चढ़ेगी । अभ्यासी ऐसा महसूस करेगा जैसे कीड़ियां इसके शरीर पर ऊपर को चढ़ रही हैं । सगुण रूप प्रकाशमय हो जायेगा । अन्त में ध्यान का विचार भी जाता रहेगा और प्रकाश में सर्वव्यापक हो जायेगा ।

अभ्यासी को यह अन्तिम अवस्था समझ लेनी चाहिए आगे का रास्ता गुरु बतायेगा । गुरु सहायता की बिना आगे नहीं जाना चाहिये ।

सिद्धि शक्ति का सदा बिचार रखना । सिद्धि शक्ति प्रकट हो जाया करती है । जब अपनी शक्ति का ज्ञान हो जाये इसका प्रयोग करना बिलकुल बन्द कर देना चाहिए यदि अभ्यासी आगे का मार्ग पार करना चाहता है । सिद्धि शक्ति आध्यात्मिकता में एक वड़ी वाधा है ।

मेरे मिलने वालो ! दोस्तो और मेरे साहित्य का पढ़ने वालो !! सुनो !!!

आज एक लड़की ने जिसको छोटी आयु से शूगर की बीमारी है, मुझे पत्र भेजा कि वह ५ रुपये अपने जेब खर्च से बचाकर जो उसको उसके माता पिता देते हैं, भेज रही है कि उसका दुख दूर हो जाये। उसको हर रोज टीका लगाते हैं तो वह जीबित है।

पत्र पढ़ा। दिल को दुख हुआ। मेरी आंखों से आंसू निकले। क्यों ? क्या मैं उसकी बीमारी को दूर कर सकता हूं ? उसने यह पांच रुपये इसलिए ही तो भेजे हैं न। मैं आज साढ़े ८८ साल की आयु में आ कर यह महसूस करता हूं कि मैंने गुरु पदवी पर आ कर जो कुछ किया है, वह मैंने पाप कमाया है। दाता दयाल जो ने काम दिया था कि निबल, अबल अज्ञानी जीवों की सहायता करना। जगत कल्याण का काम करना और भवसागर से जीवों को पार लगाना। इस इच्छा के लिए तो मेरे पास बहुत कम आदमी

आते हैं । हां ! शिक्षित और वुद्धिमान लोग अवश्य मेरे विचारों से मानसिक शान्ति और जीवन व्यतीत करने का ठीक रास्ता ले जाते हैं । मगर इस प्रकार के जो रोगी हैं, सोचता हूं कि मेरे पास उनका क्या इलाज है ? यह लड़की या मेरी लड़की जो नीम उन्मत है । इन्होंने इस जीवन में तो कोई पाप नहीं किया, कोई बुरा कर्म नहीं किया । तो फिर इनको क्यों कष्ट है ? वुद्धि मानती है कि या तो इनके पिछले जन्मों के कर्म हैं या जिस भगवान ने यह संसार बनाया है वह ज़ालम है । सन्तों ने इस भेद को समझकर संसार वालों को इस जीवन में शुभकर्म करने, धोखा फरेब या किसी को दुख देना, हेरा फेरी और ४२० न करने का उपदेश दिया है और जीवों को प्रकाश और शब्द अर्थात पारब्रह्म और शब्दब्रह्म मैं जाने की राय दी है । जिसका नाम सन्तों के मार्ग में नामदान है :—

क्योंकि मेरे जिम्मे कर्तव्य था कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना । मैं बदल रहा हूं कि ऐ मानव ! यह संसार काल और माया का है । परिवर्तनशील है । इस में कर्म प्रधान है ।

Regd. No. 26265/74

MANAV MANDIR

P—Hsp—7.

1283

ADDRESS

To

Sri: A. Hanmonth Rao

H-No:— 10—3—194/8

Humayun Nagar

Hydrabad-28 (A.P)

500028

From:

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.

मानव मन्दिर

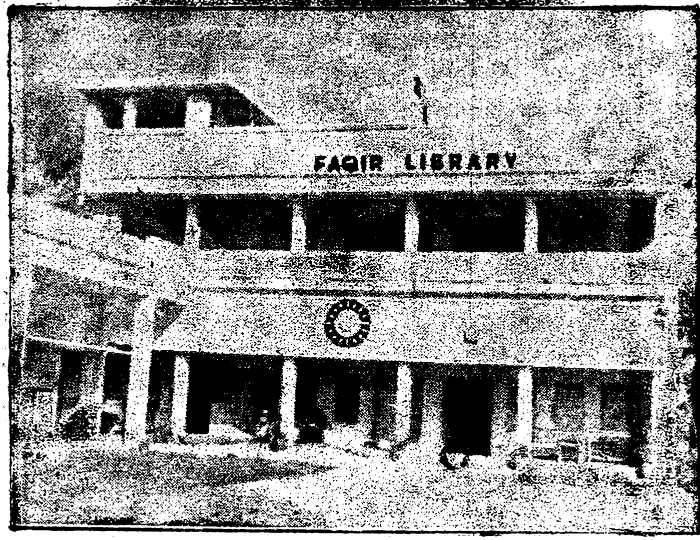

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट, होशियारपुर द्वारा बिना मूल्य बांटा जाने वाला साहित्य

1. **TRUTH ALWAYS WINS (English)**
   Written by His Holiness Pt. Faqir Chand Ji Maharaj.

2. अनुभवसार (हिन्दी)
   लेखक श्री कुबेर नाथ श्रीवास्तव, एडवोकेट, रसड़ा।

3. मानव मन्दिर (हिन्दी)—मासिक पत्रिका।

मिलने का पता :—

सैक्रेट्री :

मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

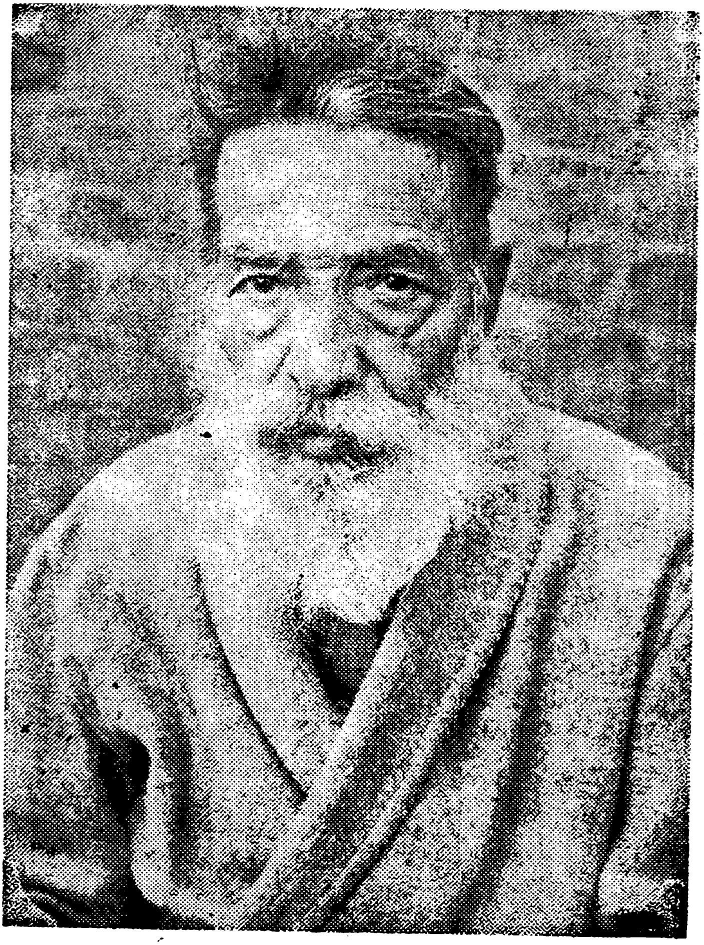

परमसन्त, परमदयाल
श्री पण्डित फकीर चन्द जी महाराज

मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक : परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक : सेठ दुर्गादासजी

२ | अक्तूबर १९७५ | संख्या ६

प्रकाश और शब्द अवश्य खुलेगा

लेखक :—

सेठ दुर्गा दास साहिब चंडीगढ़ ।

आप स्वयं प्रकाश और शब्द स्वरूप हैं। आपका आद प्रकाश और शब्द है । प्रकाश और शब्द आप की ज़ात है फिर कैसे सम्भव है कि अपका प्रकाश और शव्द आप पर न खुले। केवल समय और अधिकार की बात है ।

बहुत सज्जनों ने कई वर्षों से नाम लिया हुआ है। कई बहुत पुराने सत्संगी भी हैं । प्रातः सायं अभ्यास भी करते हैं लेकिन उनका मन उचाट हो जाता हैं क्योंकि उनकी तलाश सफल नहीं हुई । इन सज्जनों को निराश नहीं होना चाहिए। अभ्यास जारी रखना चाहिए लेकिन किसी पूर्ण सत्गुरु की संगत में रहना चाहिए ।

यह करनी का भेद है ना ही बुद्धि विचार
कथनी छोड़ करनी करे तब पावे कुछ सार।

पहले तो सुरत शब्द का अभ्यास हरएक प्राणी के लिए नहीं है अर्थात शब्द योग और प्रकाश योग हर एक व्यक्ति को नहीं करना चाहिए। यह अभ्यास तो विशेष २ जावों के लिए है। जिस जीव को इस संसार में अपना जोवन व्यतीत करने में कोई खुशी, किसी प्रकार का सुख और कोई आनन्द नहीं मिल रहा है, ऐसा व्यक्ति नाम की कमाई कर सकता है और निवृत्ति मार्ग पर चल सकता है :—

कबीर साहिब फरमाते हैं।

जहां काम तहां नाम नहीं, जहां नाम नहीं काम।
रवी रजनी दोनों न मिलें, एक ठौंर एक जाम।

जिस प्राणी में कोई भी संसारिक इच्छा शेष है अर्थात् किसी प्रकार की कामना है वह नाम जपने में सफल नहीं होगा। जैसे दिन और रात कभी इकट्ठे नहीं होते। मन की जितनी कल्पनायें हैं चाहे वे किसी प्रकार की हों वे सांसारिक इच्छायें हैं।

काम काम सब कोई कहे, काम न चीन्हे कोय।
जितनी मन की कल्पना, काम कहावे सोय॥

लेकिन यहां तो यह दशा है कि नाम ले लिया जाता है, प्रतिदिन अभ्यास भी करते हैं और संतान

भी पैदा हो रही है। भला यह द्वंद अवस्था कब तक चलेगी। यह बड़ा भारी दोष है। ऐसे अभ्यासी का मस्तिष्क ठीक नहीं रह सकता है। इसको शब्द और प्रकाश का साधन छोड़ देना चाहिए अन्यथा इसका संसार बिगड़ जायेगा।

जब संसार से वैराग्य हो चुका हो तब नाम की प्र्प्ति होगी और वैराग्य जब होगा, भोग के बाद होगा इसलिए सब प्रकार के भोग भोग लेने चहिए। संसार के सब काम करो, खूब काम करो। अपनी इच्छाओं को बढ़ने दो। धन कमाओ, खूव धन कमाओ, खूव इकट्ठा करो। कीर्ति प्राप्त करो। अच्छी सन्तान हो। स्वस्थ्य हो। समाज में मान प्रतिष्ठा पैदा करो लेकिन इसके लिए सदाचारी होना शर्त है। थोड़ा २ सत्संग भी करते रहो ताकि बीज अंकुर बनकर समय पर फूट पड़े। यदि आपको अपने आदघर की याद रही। प्रभ मिलाप ने आपके दिल में तड़प पैदा कर दी और आपका मन संसार के पदार्थों से उचाट हो गया। फिर नाम की ओर आप चलेंगे और अधिकारी बनेंगे।

जबतक इस प्रकार का अधिकार पैदा नहीं होता

तब तक सुमिरन किया करो। सुमिरन कहते हैं किसी की याद को। प्रभु को याद करना इसका सुमिरन है। प्रातः सायं सुमिरन हो सकता है। चौबीस घन्टे का सुमिरन बहुत लाभदायक है। इसको समझने के लिए एक विवाहित स्त्री का उदारहण लीजिए। स्त्री को ज्ञान है, समझ है, अनुभव है कि इसका पति है और वह विवाहित है, न तो वह अपने पति का नाम ज़वान से लेती है, न ही अपने पति के नाम का सुमिरन प्रातः सायं करती है और न ही वह अपने पति की मूर्ति का ध्यान करती है। लेकिन फिर भी इसको एक प्रकार का ज्ञान है कि इसका पति है। यह है चौबीस घण्टे का सुमिरन।

आप भी प्रभु को सर्वव्यापक समझ लो कि वह तुम्हारे अंग संग रहता है। वह तुमसे कभी जुदा नहीं है। आपके हर एक कर्म का वह साक्षी है। इस विचार से आपके जीवन की घड़त होती रहेगी। सुमिरन तीन प्रकार का है। एक तो जवान से ऊंची-ऊंची आवाज़ से बोलकर राम राम कहना दूसरे बिना जवान को हिलाये। इसको अजपा जाप कहते हैं अर्थात केवल

मन से राम राम कहना । तीसरे जैसे ऊपर विवाहित स्त्री का सुमिरन बताया गया है ।

जब सुमिरन पक्का हो जाता है । प्रभु के चरणों मे श्रद्धा और विश्वास हो जाये । इसको अपना मालिक, अपना पिता और अपना सत्गुरु समझने लग जाओ तो ध्यान आरम्भ कर दो । अपने मालिक को किसी एक रूप में मान लो, हां केवल एक रूप में । जीवित और पूर्ण पुरुष पर यदि श्रद्धा और विश्वास आ जाये तो मानो जीवन सुधर गया और किशती किनारे पर लगने वाली है । उस महांपुरुष का सत्संग किया करो । सत्संग के बचन ध्यान से सुनो, इनको गुणो और इन पर अमल किया करो ।

बन्धे को बन्धा मिले छूटे कौन उपाय
कर संगत निर्बन्ध की, पल में दे छुड़ाये ।

मन का स्थान दोनों आंखो के मध्य में है । जब दोनों आंखों को बन्द करो तो एक आन्तरिक आँख खुल जाया करती है जिसको शिव नेत्र कहते हैं । इस स्थान पर मन कौ इकट्ठा कर लेना चाहिए । मन चंचल है । मन की वृत्तियां बिखरी रहती हैं । यहां पर मन की वृत्तियों को इकट्ठा करने का यत्न करो

ताकि मन की चंचलता दूर हो जाये। मन पर अन्न, संगत और कपड़ों का प्रभाव बहुत होता है। इसका ध्यान रखना चाहिए। सादा कपड़े हों, सात्विक भोजन हो, संगत अच्छी हो। इन पर कंट्रोल हो। अपने इष्ट देव की मूर्ति को इस स्थान पर बैठा लो, पैदा कर लो। मूर्ति को प्रकाशमय बना लो। उस प्रकाश स्वरुपी मूर्ति में अपने मन को लय कर दो, अपने मन को मूर्ति में गुम कर दो, लय कर दो। देहाध्यास छूट जायगा। ध्यान मग्न हो जाओगे ऐसा आनन्द मिलेगा कि यह मज़ा दिन प्रति दिन बढ़ता जायेगा।

लेकिन ऐसा तभी होगा यदि आपका अपने इष्टदेव से प्रेम है, सच्चा प्रेम है, सच्ची लगन है, भक्ति भाव है। इनके चरणों में श्रद्धा और विश्वास पैदा हो चुका है। यदि ऐसा नहीं है तो सफलता कठिन है।

यदि आपके मन की यह दशा हो जाये कि अपने इष्ट देव की मूर्ति प्रकाश मय हो जाये और यदि आपकी आयु 50-60 साल से अधिक है और अपना

कारोवार अपनी संतान के हवाले कर चुके हैं। आर्थिक दशा ठीक है। जीवन का अच्छी प्रकार निर्वाह हो रहा है। सांसारिक चिन्ता नहीं है तो प्रकाश और शब्द का साधन करना चाहिए अन्यथा विल्कुल नहीं, विल्कुल नहीं।

प्रकाश और शब्द का साधन उनके लिए है जो आवागवन से छुटकारा चाहते हैं, मुक्त होना चाहते हैं, जीवन मुक्त होना चाहते हैं, जीवन मुक्त दशा में जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, आत्मपद में सभाधि लगाना चाहते है।

यदि आप संसार चाहते हैं, अपना संसार बनाना चाहते हैं, तो गुरुमूर्ति का ध्यान और राधास्वामी नाम का सुमिरन करना चाहिए। आपकी इच्छायें पूर्ण होती रहेंगी और आपका जीवन सफलता से व्यतीत होगा।

लेकिन एक बात याद रखनी अवश्यक है यदि विचार शुभ है, नेक हैं, आपके कर्म अनूकूल हैं तो सुमरिन ध्यान करना चाहिए अन्यथा सुमिरन और ध्यान हानिकारक सिद्ध होगा। यदि अभ्यासी कामी है, मन कठोर है, शराबी है और बुरी आदतें हैं तो सुमिरन ध्यान से यह बुरी शक्तियें ज़ोर पकड़ जायेंगी

इन बुराईयों को बल और शक्ति मिलेगी। इसलिए पहले किसी पूर्ण, शब्द स्नेही गुरु का सत्संग अनिवार्य है ताकि उस का हर प्रकार से सुधार हो जाये। फिर आध्यत्मिकता की ओर चलना चाहिए।

हमारे शरीर में हर एक इन्द्री विशेष २ काम करती है। आँख केवल देखने का काम करती है, कान सुनने का और नाक सूघने का आदि २। इसी प्रकार ज्ञान हो कि हमारे मस्तिस्क में तीन नड़ियें हैं, इंगला पिंगला, सुषुम्ना इनका नाम है। शिव नेत्र की ओर इंगला, वाईं ओर पिंगला और बीच में सुषुम्ना नाड़ी है। जब आप सुमिरन ध्यान में वैठोगे तो आपकी एकाग्रता बाहर की आखों के बन्द कर लेने के बाद इन तीन नाड़ियों में से एक नाड़ी में प्रवेश कर जायेगी। यदि सुषुम्ना नाड़ी में आपकी सुरत प्रवेश कर गई है तो आध्यत्मिक आनन्द पाओगे। यदि इंगला में प्रवेश कर जाये तो परोपकार के काम, दान पुण्य, भलाई और नेकी के काम पर अमल होना आरम्भ हो जाएगा। स्वभाव इन अच्छे कामो की ओर जायेगा। यदि पिंगला नाड़ी में प्रवेश होगी तो अच्छा नहीं होगा। बुरे बिचार ओयेगें बुरे कर्म

करने लग जाओगें, आदि २। इसलिए सुमिरन ध्यान के समय अपने मन की वृत्ति को नाक की सीध में मस्तिष्क में बिलकुल बीच में रखनी चाहिए, न दाईं ओर न बाईं ओर। मार्ग सीधा है; सीधे उपर को चलो।

भगवान कृष्ण जी महाराज गीता में फरमाते है छटा अध्याय श्लोक 36 :—

अगर नसफ पर ज़ब्त कामल नहीं, तो फिर योग इन्सां को हासल नहीं।

यदि किसी कारण वश आपकी सुरत सुषुम्ना नाड़ी में घुस नहीं सकती तो सुमिरन ध्यान छोड़ देना चाहिऐ। फिर नेक और भलाई के काम करो। गरीब और बेसहारा की सहायता करो। आपको इससे ईश्वर दर्शन की प्राप्ती होगी। भगवान कृष्ण अध्याय छटा श्लोक 40-45 में फरमाते हैं।

श्लोक 40 :—

कि इन्सान अगर नेक करदार है, तबाही में कब वह गिरफ्तार हैं।

श्लोक 45 :—

जन्म पर जन्म लेके पाय कमाल, कि हासल हो आखर खुदा का बसाल।

अर्थ श्लोक 36 :—

यदि मन पर वस नहीं तो योग की कमाई कठिन।

श्लोक 40 :—

यदि मानव नेक कर्म करता है तो नष्ट न होगा।

श्लोक 45 :—

नेकी करने वाला मानव जन्मों के बाद ईश्वर के दर्शन अवश्य पायेगा।

ममता से बचने का उपाय

सत्संग हजूर परमसन्त परमदयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर ।

दिनांक 22 मई 1975

ममता जाती नहीं मेरे मन से ।।
मेरा कोई न मैं हूँ किसी का, मुझमें कुछ नहीं मेरा ।
समझ बूझ ऐसी काम न आई, करता हूं मेरा तेरा ।।
मिटे न यह लाख यत्न से ।
साथ न लाया अपने कुछ भी, साथ नहीं कुछ भी जावे ।
बीच की दशा में साथ हुआ है, समझ में बात यह आवे ।।
मनन श्रवण से कथन से।।
मेरे तेरे पने का बन्धन, मिथ्या बन्ध बांधया ।
यह घन्धन नहिं काटे कटता, कितना उपाय कराया ।।
योग युक्ति साधन से ।।

क्या लें आया क्या ले जायगा, यह जाने सब कोई ।
जान जान अनजान बना है, अचरज अचरज होई।
छूटा नहीं कोई यह बन्धन से ।।
तन मन धन साधन में ममता, योग ज्ञान में ममता ।
राधास्वामी अब तो दया करो तुम, चित में आवे समता ।
जाये ममता जीवन से ।

राधास्वामी ! यह शब्द मैंने जान बूझ कर निकलवाया । क्यों ? कल सेठ दर्गादास जी का पत्र आया । लिखता है कि मेरे अन्तर जज्बा पैदा होता है और मैं लेख लिखता हूं । बारह लेख मेरे लिखे हुये आगे ही मानवता मन्दिर में पड़े हैं और भी वहुत हैं । मैं चाहता हूं कि आप दो लेख मेरे हर महीने छपवा दिया करें । गोपी लाल कृषक ने सन्त-मत लेखमाला भेज दी है, वह इसको छपाना चाहते हैं । अब मैं अपने आपसे पूछता हूं कि तू फकीर लन्द ! इतना काम करताहै, किताबे लिखता है और सत्संग करवाता है । हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने भी पाँच छे हज़ार किताबें लिखीं । संसारी लोग, और गृहस्थी, धन, संतान व मान की इच्छा में फिरते हैं । तो अब मैं अपने आपसे पूछता

हूं कि इन महात्मा लोगों और संसारी लोगों में अन्तर क्या है ? वह भी अपने 'मैंपने' में फंसे हुये हैं और महत्मा लोग भी ! मैं भी 'मैंपने' में ही फंसा हुआ हूं । किताबें लिखता हूं और सत्संग कराता हूं । सेठ दर्गादास और गोपीलाल कृषक भी तो फंसे हुये हैं । तातपर्य यह है कि सब फंसे हुये हैं । एक कुछ करता है, दूसरा कुछ और करता है ।

मैं ऊंचा चला गया । अब मस्तिष्क के अन्तर कुछ नहीं रहा । मेरे अनुभव ने यह सिद्व कर दिया है कि सुमिरन में भी ममता है और भजन और ध्यान में भी ममता है । सुमिरन ध्यान भजन भी किसी इच्छा के लिये करते हैं । शांति के लिये सतलोक या अगमलोक में जाने केलिए कौन साधन करता है । क्या ममता के जाने का उपाय है ? मैं सारी रात यही सोचता रहा । इस परिणाम पर आया कि जीवन बना । जो वस्तु भी बनी वह जिस प्रकार की प्रकृति से बनी है वह अपना खेल जरूर खेलेगी ।

इस पाठक सहिब के अन्तर जब जनून आता है, तो लोगों को पकड़कर खड़ा हो जाता है और उपदेश

करता है। यह भी ममता है। मैं अपने आपसे पूछता हूं, क्या फकीर ? तेरी ममता चली गई ? जबतक जीवन है मेरे विचार में ममता नहीं जाती। यह मेरा अनुभव है। जब तक किसी की सुरत शरीर, मन, प्रकाश और शब्द में है, इसकी ममता नहीं जायेगी। ममता का अर्थ सूक्षं शकल में यह है कि जब तक हमारा 'हैपना' और 'मैंपना' मौजूद है, यह झगड़े समाप्त नहीं होते। मेरी ममता तो जाती नहीं। फिर कब जाती हैं ? किसी समय चलीं जाती है। मगर इस समय 'मैं' नहीं रहती। यत्न करता रहता हूं कि ममता चली जाये। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने लिखा है कि योग ज्ञान में भी ममता है और सुमिरन भजन में भी ममता हैं।

तन मन धन साधन में ममता, योग ज्ञान में ममता ।।
राधास्वामी अब दया करो तुम, चित में आवे समता ।।

राधास्वमी दया कब करेगा ? मुझे पता नहीं जो राधास्वामी की दया मैं समझता हूं। वह राधास्वामी है अनुभाव। वह अनुभव राधास्वामी कब प्रगट होता है और किसके अन्तर प्रकट होता है ? जो अपने जीवन और अपनी ममता

को watch करता रहता है। दूसरे शब्दों में निरख परख करता रहता है। और जब वह अपने अन्तर चोटी पर पहुंच जाता हैं तब ममता जाती रहती है। वहां किसने पहुचाया ? दया तो हजूर दाता दयाल जी महाराज की और आप लोगों की है। आपके अनुभवों ने मेरी आँखें खोल दी है और मुझे ज्ञान हो गया कि जो कुछ मेरे अन्तर फुरना फुरती है चाहे वह परमार्थ की है या स्वार्थ की ! लेकिन यह सब की सब ममता है। 'मैंपना' है। मैंने यह काम किया। कई बार सोचता हूं कि मेरे काम से क्या बन गया ? बाल की खाल तो उतार के रख दी। लेकिन क्या कर लिया तू ने ? सुख भी उठाया और कई बार इस में दुख भी उठाया और इसी में अनन्द लिया। इस ममता के जाने का उपाय क्या है ? इस ममता को बढ़ाओ यह मेरा अपना अनुभव है। फिर वह पूरी हो कर अपने आप समाप्त हो जायेगी। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने लिखा था कि फकीर ! प्रथम तो इक्छा ही मत करो और यदि कोई पैदा हो ही जाती है और नहीं रुकती तो उसको भोगो तब समाप्त होगी।

मेरी ममता ने प्रण किया था कि मैं सन्तमत के मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा वह लोगों को बता जाऊंगा। यह मेरी वासना ही थी। अब मैंने इसका भोग भोग लिया। बहुत कुछ कर लिया है और अब लग भग समाप्त है। इसलिए सन्त किसी की भावनाओं को रोकते नहीं। जनून निकल जाना चाहिए। इसलिए जो सत्संगी आते हैं। इनको कहता हूं कि निकालो अपना जज्वा। दयालदास है। इसको काम दिया है कि लोगों की सुरतें चढ़ाओ और नाम दान दो। दुर्गादास ने दो लेख हर महीने छपवाने की इच्छा की। मैंने कहा कि छपवा दूंगा। कृषक जी ने सन्तमत लेख माला छपवाने के लिए भेजी मैंने कहा। हाँ भई! तेरो लेख माला भी छपा दूंगा। जनून को भोगो। इसलिए सन्त लोगों के जज्वे को खुलकर खेलने का अवसर देते हैं। जबतक हमारी ममता खुलकर नहीं खेल लेगी वह समाप्त नहीं होगी। भोग के बाद मोक्ष होता है। आदमी विवाह कर लेता है, काम भोग लेता है फिर शांति आ जाती है मगर तुम किसी गुरु के जो पूर्ण हो उसके अधीन रहो। जो तुम्हारे

जनून को गलत मार्ग पर न जाने दे हज़ूर दाता दयाल जी ने मुझे यही लिखा था ।

जब लग प्रारब्ध है भाई, भोग काट दे सारा ।
भोगे प्रारब्ध तब कुछ नाहीं, आगे अगम अपारा ।

पहले के सोचे हुए विचारों का नाम ही प्रारब्ध कर्म है । इनको भोगना पड़ता है । कृषक और दुर्गादास की दशा देखी । अपना जीवन सामने आया । हज़ूर दाता दयालजी महाराज का जीवन भी मेरे सामने आया ।

हज़ूर दाता दयाल जी मसाराज ने लिखा था फकीर ! सत्संग कराना भी उपाधि है । निस्संदेह हज़ूर महाराज ने आज्ञा दी थी मगर मेरी अपनी भी इच्छा थी, ममता थी । मैंने इतना काम किया कि अब दो तीन सौ आदमी मुझे सदा घेरे रहते हैं । देखो यह खेल कब तक चलता हैं । मुझे हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने यह संस्कार दिया था । मैं सोचता हूं कि क्या तू जगत कल्याण कर गया ? और क्या बन गया ? असल में मेरा ही जज्बा था और अपना ही कर्म भोगता हूं । अपने दिल के जनून को किसी पूर्ण गुरु के अधीन रखो और फिर

इस जज्बे को भोगने का यत्न करो फिर शान्ति आयेगी । वह पूर्ण गुरु तुम को जनून भोगते समय किसी ग़लत मार्ग पर न जाने देगा ।

मैंने बहुत कुछ किया और अब मैं उस अवस्था में जाता रहता हूं जहां ममता नहीं है अर्थात जहाँ मेरी हस्ती नहीं है । मैंने मालिक को मिलने के लिए जीवन खो दिया । कहाँ पहूंचा ? मालिक वह अवस्था है जहां मैं नहीं या मेरी ममता नहीं । वह क्या अवस्था है ? इसका प्रमाण सन्तों की वाणी है और हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के शब्द इसका प्रमाण हैं ।

Silence in the begining and Silence in the end

इबतदा में खामोशी इन्तहा में खामोशी ।

और इसके बाद प्रमाण है कबीर साहिब की बाणी,

सखिया वा घर सब से न्यारा, जहं पूरन पुरुष हमारा ।
जह नहिं सुख दुख सांच झूठ नहिं पाप न पुन्न पसारा ।
नहिं दिन रैन चन्द नहिं सूरज, बिना जोति ऊजियारा ।
नहिं तहं ज्ञान ध्यान नहिं जप तप, वेद कतेब न वानी ।
करनी धरनी रहनी गहनी, ये सब जहां हिरानी ।
धर नहिं अधर न बाहर भीतर, पिंड ब्रह्मंड कुछ नाहीं ।
पांच तत्व गुन तीन नहीं तहं, साखी शब्द न ताहीं ।

मूल न फूल बेल नहिं बीजा, बिना बृच्छ फल सोई।
ओअं सोयं अर्ध उर्ध नहिं स्वासा लेख न कोई।
नहिं निर्गुन दर्गुन भाई, नहिं सूच्छम अस्थलं।
नहिं अच्छर नहिं अविगत भाई, ये सब जग के भूलं।
जहां पुरुष तहवां कछु नाहीं, कहै कबीर हम जाना।
हमरी सैन लखे जो कोई पावे पद निरवाना।

मैं मलिक को मिलने निकला था। भाग्य मुझे एक दृश्य द्वारा हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरण कमलों में ले गया जिन्होंने मुझे सन्तमत की शिक्षा दी। मैंने उनको मालिक का रूप समझकर उनके वताये हुये मार्ग पर चलने का प्रण किया कि इस मार्ग पर चलते हुये जो मेरा अनुभव होगा वह संसार को सचाई के साथ खोलकर बता जाऊगा। सन्तों ने यह कहा है कि वहां कुछ नहीं। वह तो जो कुछ है सो है। वहां खौज करने वाले की हस्ती ही समाप्त हो जाती है। इसलिए यही कह देते हैं कि वहां कुछ नहीं और किसी को कोई पता न लगा। किसी ने कुछ कह दिया किसी ने कुछ, हैरत, हैरत हैरत। इस अनुभव के आधार पर मैंने यह कहा कि मैं कौन हूं ? चेतन का एक वुलबुला। इस बुलबुले में

एक मेरी 'मैं' पैदा हो गई और इस 'मैं' ने ही सारा खेल खिलाया। यह खेल क्या है ? पता नहीं। अब उस दिन की प्रतीक्षा है, जिस दिन यह 'मैं' ही समाप्त हो जाये।

साँप का सिर कुचला गया हैं। मगर दम अभी चल रहा है।

यदि कोई काम करना होता तो हजूर दाता दयाल जी महाराज को पत्र लिखते। यह काम कर लूं ? हाँ करलो। जब एक दो साल के बाद विचार बदल जाता तो फिर लिखते। महाराज ! यह कर लूं ? हाँ करलो। मेरे दिल में यह भ्रम पैदा हो गया कि हजूर दाता दयाल जी महाराज को जो भी कोई कुछ कहता है। वह आज्ञा दे देते हैं। क्यों ? अब समझ में आया कि वह क्यों यूं कहते थे। क्यों किजब तक किसी जज्बे का भोग नहीं भोगा जाता वह समाप्त नहीं होगा और तब तक शांति नहीं मिलेगी।

इसलिए मैंने दुर्गादास को कह दिया। वहुत अच्छा। कृषक को भी कह दिया। वहुत अच्छा और

यदि कोई पूछे कि यह काम कर लूं ? तो मैं कह देता हूं कि हाँ कर लो। भोग के बाद ही मोक्ष मिलेगी और भोग भोगने के बाद ही शांति है। इसलिए अपने जज्बे को भोगकर इसको समाप्त कर दो।

'सब को राधास्वामी'

सत्संग हुज़ूर परम दयाल जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर

दिनांक 1 जुलाई 1975

राधा स्वामी मत वह क्या समझे, जो निगुरा और अज्ञानी है।
सत तत्व सार वह क्या जाने, गुरुमत नहीं नहीं गुरु ज्ञानी है।
कोई लोक लाज में अटका है, कोई रीति रसम में लटका है।
अज्ञान से उसने नें पकड़ी है, जो लोक में लीक पुरानी है।
बे ठौर ठिकाने की भक्ति, क्या देनी उसे सिद्धि शक्ति।
नहीं सूझी योग यत्न युक्ति, निष्फल सब मानी गुमानी है।
नहीं नाम की महिमा को जाना, नहीं नामी पद को पहिचाना।
तोते की रटन से अटकाना, सब भूल भरम भरमानी है।
जप तप में आयु गई सारी, रहा संसारी का संसारी।
अपना भी नहीं वह हितकरी, यह लाभ नहीं है हानी हैं।
नीचे नहीं नाम कोई पावे, ऊंचे चढ़ चौथा पद पावे।
तब नाम राग की धुन गावे, वह पृथ्वी नहीं असमानी हैं।
नर देह की गति मति को जानो, जो कहता हूं उसको पहचानो।
निज अनुभव से अपने मानो, नहीं भरम फांस की फंसानी है।

हैं कर्म इन्द्री नीचे भाई, ऊंचे ज्ञान इन्द्री जगा पाई।
मन बुद्धि से जब ऊंचे जाई, यह विधि तुमको समझानी है।
तीनों से ऊंचेसुरत रहे, ऊंचे चढ़ कर वह शब्द गहे
इस शब्द में नाम का रूप लहे. यह नाम महा सुखदानी हैं।
नीचे कहां नाम का है बासा, चौथे पद बांध उमकी आशा।
त्रिलोक में काल का है फांसा, यह भरम तुझ जतलानी है।
कर शब्द सुरत का तू साधन, तब हाथ आयेगा नाम रतन।
राधास्वामी योग का सीख जतन जो यह नहीं भर्म कहानी है।

राधास्वामी ! किसी वस्तु की खोज में मौज या मेरे कर्म मुझको हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों में ले गये। उन्होंने मुझे राधास्वामी मत या सन्तमत की शिक्षा दी। मैंने प्रण किया था कि मैं इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो कुछ मुझे प्राप्त होगा वह संसार को बता जाऊंगा। आज यह शब्द सुना। अपने आपसे प्रश्न करता हूं कि क्या तू ने राधास्वामी मत को समझा है और जाना है ? यदि तुमने समझा है और जाना है तो तुम बताओ कि तुमको क्या मिला ?

राधास्वामी मत वह क्या समझे, जो निगुरा और अज्ञानी है। निगुरा कौन है ? लोग यह कहते हैं कि जिसने गुरु धारण नहीं किया वह निगुरा है। गुरु तो

सारे संसार ने धारण किया हुआ है । तो जिन्होंने गुरु धारण किया हुआ है । क्या वह इस मंजल पर पहुच गये ? निगुरा वह है, जिसने गुरु की बात को नहीं समझा और गुरु की बात पर अमल नहीं करता । केवल किसी को गुरु मान लेने से तुम गुरु परायण नहीं हो सकते । जिसको समझ नहीं वह अज्ञानी है । गुरु नाम है ज्ञान विवेक और अनुभव का । जो सार ज्ञान, सार अनुभव और सार विवेक को समझ कर अपना जीवन व्यतीत करता है, वह गुरुवाला हैं । केवल किसी आदमी को गुरु मानकर उसके प्रेम में जीवन व्यतीत करने वाला गुरु वाला नहीं है । किसो ने गुरु की वाहर को देह के साथ जीवन व्यतीत कर दिया और किसी ने स्त्री या बच्चे के प्रेम में जीवन व्यतीत कर दिया । क्या अन्तर है दोनों में ? यह सब मोह ममता में फंसे हुये हैं ।

ऐ भारत वासियो ! मेरे साहित्य को पढ़ने वालो !! मैं यह नहीं कहता कि तुम मुझे गुरु मानो या मेरी बात को सत मानो मैं तो अपना कर्म भोगता हूं । मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव

कह जाऊंगा। यह मेरा कर्म भोग है। मुझे न गुरु बनने की और न गुरु कहलाने की हवस है। मैं तो सन्तमत को जानना चाहता था। मैं तो मालिक को मिलने निकला था और 24 घंटे रोने के बाद एक दृश्य द्वारा हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों गया था।

सत तत्व सार वह क्या जाने, गुरुमत नहीं नहीं गुरु ज्ञानी है।
कोई लोक लाज में अटका है, कोई रीति रसम में लटका है।
अज्ञान से उसने पकड़ी है, जो लोक में लीक पुरानी है।

लोग गुरुमत में शामल हो जाते हैं। जैसे गुरु कपड़े पहनता हैं वैसे ही कपड़े पहनने लग जाते हैं। वैसे ही केश दाढ़ी मूंछ रख लेते है और भेसधारी बन जाते हैं। अपने आपसे पूछता हूं कि फकीर! तुमको क्या मिला? दोस्तो! मिलना क्या था। लोग कहते है कि मेरा रूप उनके अन्तर प्रगट होता है और मेरे रूप ने यह कर दिया और वह कर दिया। लेकिन मैं तो होता नहीं और न हो मुझे कोई पता होता है। इससे मुझे यह विश्वास हो गया कि जो कुछ भी किसी के अन्तर प्रकट होता हैं वह असल में है नहीं मगर भासता है। वह केवल

संस्कार हैं, जो आदमी के मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं। जब से मुझे यह समझ आई तो मैं मन के विचारों, भावों, संकलपों और शक्लों को छोड़कर मन के परे जाता रहता हूं। आगे क्या होता है ? यह संसार नहीं भासता। अभी समाधि से उठा हूं जबतक बहां था तो मुझे कोई पता नही था कि मैं कौन हूं, कहां हूं और क्या हूं। मेरे अन्तर एक चेतना अर्थात् Consciousness है, जो इस चेतनपने के बोध को महसूस करती है। उसमें कोई चिन्ता, कोई वासना या इच्छा नहीं होती। जब वह चेतनपना शरीर, मन, बुद्धि रूप रंग और शकलों, प्रकाश और शब्द को छोड़ जाता है, तो उसके बाद जो कुछ शेष रह जाता है, यदि वह राधास्वामी है तब तो वह मुझे प्राप्त है अन्याथा नहीं। यदि कोई और राधास्वामी नाम है तो वह हजूर दाता दयाल जी महाराज जानते होंगे मुझे नहीं पता।

बे ठौर ठिकाने की भक्ति. क्या देनी उसे सिद्धी शक्ति।
नहीं सूझी योग यतन युक्ति निष्फल सब मानी गुमानी है।

यदि आज हजूर दाता दयाल जी महाराज होते तो मैं उनसे प्रार्थना करता कि अन्य भक्तियां निष्फल

क्यों हैं ? मेरे पास कोई प्रमाण तो है नहीं मगर मैं इतना कह सकता हूं कि हिन्दु आवागवन को मानते हैं। अन्तमता सोगता के अनुसार यदि शरीर के त्याग के समय मन मौजूद है और मन किसी स्थान पर लगा हुआ है तो उसको दूसरा जन्म अवश्य मिलेगा और मिलना चाहिए। जीवन में जिस शकल विचार और रूप को सत माना हुआ है और वह अन्त समय में यदि उसके सामने है तो वह आदमी मन के चक्कर में है। तो उसकी वासना के अनुसार उसको दूसरा जन्म मिलना अनिवार्य है। सन्तों का मार्ग निवृति का है। सन्तो ने अपनी खोज के बाद और अनुभव के बाद यह कहा कि यदि जन्म मरण से बचना चाहते हो तो मन को छोड़ जाओ और मन से आगे शब्द और प्रकाश में चले जाओ। मन को छोड़ जाने के बाद मरने वाले के सामनें प्रकाश और शब्द जब आयेगा तो मरने वाला कहां जायेगा। इसका कोई पता नहीं और न ही कोई दावा है। केवल दलील ही दलील है। इसलिए मेरी यह इच्छा है कि मालिक मुझे शक्ति दे तो मैं शरीर छोड़ने के बाद बता सकूं कि मैं कहां गया हूं। अब तक तो मैं यह समझता हूं

कि सन्तों की यह खोज है और अनुभव है और मेरी भी यह खोज है। पता नहीं यह ठीक है या ग़लत है। इसलिए मेरी खोज अभी तक अधूरी है।

अभ्यास के समय में यह समझ कर समाधि में जाता हूं कि मैं अब मर रहा हूं। शरीर मन प्रकाश और शब्द से आगे चला जाता हूं, लेकिन शरीर के बाहिर तो निकलता नहीं। इस अनुभव को लेकर राधास्वामी मत वालों ने लोगों को अपने पीछे लगाने केलिए यह अपना मत चलाया। किसीको कोई पता नहीं कि आदमी कहाँ जाता हैं। किसीके पास प्रमाण नहीं। कहते हैं कि सन्त ज्योति जोत समाये। लेकिन प्रमाण किसींके पास कोई नहीं है। बल्कि उनके अनुयायी तो यह सिद्ध करते है कि ज्योती जोत नहीं समाये। जो सन्त ज्योती जोत समा गये। उनके बारे लोग कहते हैं कि वह साक्षात रूप में हमारे अन्तर आये और यह कहा और वह कहा जैसे सन्त कृपाल सिहं जी कहा करते थे कि मेरे अन्तर हजूर बाबा सावनसिहं जी महाराज आते हैं और मुझे संदेश दे जाते हैं। यदि यह सच मान लिया जाय तो फिर उनका आवागवन समाप्त नहीं

हुआ। वह तो अभी तक कुछ बने हुये हैं जो चेलों के अन्तर अ ते हैं। इसलिए मेरी खोज अभी तक अधूरी है। सन्तों का मार्ग केवल भवसागर से पार जाने का है। मैं तो यह कहता हूं कि बाहर से कोई किसी के अन्तर नहीं आता और न ही इन घटनाओं का मुझे कोई पता होता है। जब मैं जिवित बैठा हुआ किसी के अन्तर नहीं जाता तो मैं कैसे मानूं कि कोई मरा हुआ गुरु किसी चेले के अन्तर प्रटक होता है। यह भ्रम है और अज्ञान है। इसी वास्ते सन्तों ने कहा है।

आप आपको आप पहचानो, कहा और का नेक न मानो।

अपना अनुभव मुख्य है। कोई कहता है कि उसके अन्तर राम प्रकट होता है, कोई कहता है कि कृष्ण प्रगट होता है और किसी के अन्तर गुरु प्रगट होता है। यह सब मन का खेल है और मन का चक्कर है। क्योंकि जोव मन के चक्कर से बाहर नहीं निकला। इसलिए जीवन में जो कुछ जप तप भक्ति करता रहा वह सब निष्फल गई। क्योंकि जा भक्ति उसने की वह ठौर ठिकाने की भक्ति नहीं थी।

असली गुरु भक्ति क्या है ? किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग में जाकर उसके बचनों को सुनना, गुनना और उन पर अमल करना। मैं निर्भय होके कहना चाहता हूं कि इस समय का जितना गुरुवाद है' यह सब का सब जीवों को अपने जाल में फंसाने का यत्न करता है। कोई सचाई नहीं बताता। मगर सचाई यह है कि इनका भी कोई दोष नहीं है। संसारी लोगों को सतता की आवश्यकता नहीं है। संसारवालों को तो संसार चाहिये।

नहीं नाम की महिमा को जाना, नहीं अनामी पद को पहचाना।

नाम की महिमा और नामी पद क्या है ? जब मैं बात को समझ गया तो फिर जो धुन मेरे अन्तर प्रगट होती है, वह किससे निकलती है ? असल में जो मैं हूं उसकी गति से धुन निकलती है। तो फिर नामी पद क्या हुआ ? हमारा अपना ही आपा। हम में से नाम निकलता हैं। हमारे अन्तर में जो सबसे ऊंची आवाज़ है, वह हमारी अपनी ही खोपड़ी में से निकलती हैं। मैंने यह समझा है नाम को।

तोते की रटन से अटकाना, सब भूल भरम भरमाती है।

सारा जीवन ज़बान से या मन से राम राम या राधास्वामी राधास्वामी करते रहना या पांच नाम का जाप करते रहना तोते की रटन है। इससे कुछ नहीं बनता। क्योंकि इससे हमारे self को कहीं ठहरने का अवसर नहीं मिलता और न ठहरने के कारण अशांति दूर नहीं होती। गति में चैन नहीं। जब तुम काम करते थक जाते हो तो आराम करने के लिए लेट जाते हो यह लेट जाना थक जाने के बाद आता है और यह स्वभाविक है। यदि तुम थके हुये नहीं हो तो लेट जाने पर भी नींद नहीं आती, वल्कि बेचैनी आती है। ऐसे ही शारीरिक मानसिक और आत्मिक जीवन को आराम देने या शांति देने के लिए सन्तमत की शिक्षा है। मरने के वाद क्या होगा ? पता नहीं। यह कहानियें हैं। शरीर से निकलने के बाद यदि कुछ बता सका तो बता जाऊंगा। आज तक किसी ने बताया तो नहीं मगर मैं देखना चाहता हूं।

जप तप में आयु गई सारी, रहा संसारी का संसारी।
अपना भी नहीं वह हितकारी, यह लाभ नहीं है हानी है।

संसार क्या है ? सम और सार। वह जो हमारा असली रूप है। जिस में से शब्द प्रकट

होता है। उसके सामने जो कुछ भी आता है, वह है संसार। जबतक आदमी कर्म धर्म जपतप और तीरथ व्रत करता रहेगा वह तो संसार में है। क्योंकि गुरु रूप भी और शब्द और प्रकाश भी उसके अपने आपसे ही तो निकलता है। इस कारण सन्तों ने कहा है।

भक्त उपासक योगी ज्ञानी, इन सब चक्कर खाया।

क्योंकि वह अपने संसार से बाहर नहीं गये और संसार में ही रहे। योगी जिसपर ध्यान जमाता है। वह उसका संसार है। ज्ञानी जिसका विचार करता है, वह उसका संसार है और भक्त जिसकी भक्ति करना है वह भी उसका संसार है। इसलिए उन्होंने अपना भला नहीं किया। अपने आपमें वापस चले जाना ही अपना भला करना है। मैं बारह साल के बाद वसरेबगदाद से वापिस अपने घर आया कि नहीं। यह तो संसारिक जीवन की बात है। मैं आदघर जाना चाहता था। जो आदमी यह समझता है कि संसार में कहीं भी सुख नहीं है। उसके लिए सन्तमत है। सब के लिए नहीं।

विषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन संतान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे।

बिना थके हुये आराम की नहीं सूझती। जब थक जाओगे तब अराम की सूझेगी। इसलिए साधारण लोगों के लिए नाम दान नहीं है। पहले काम करो। शरीर और मन को थकाओ। आनन्द लो फिर रुह को थकाओ। जब तीनों में थकावट आ जायेगी फिर आराम की ओर आओगे। कबीर साहिब ने भी एक शब्द में लिखा है।

मन तू थकत थकत थक जाई।
बिन थाकै तेरौ काम न सरै है, फिर पाछे पछताई।
जब तक तः कर जीव रहित है, तब लग परदा भाई।
टूट जायँ औट तिनका की, रसक रहै ठहराई।

इस लिए सन्तमत में सब से पहले प्रवृति मार्ग में लगाया जाता है ताकि खूब काम करो। जब थक जाओगे तब निवृत्ति की और आओगे। लेकिन आज कल तो गुरुलोग क्या करते है। जो भी आया उसको नाम, जो भी आया उसको नाम ?

राधास्वामी मत वह क्या समझे, जो निगुरा और अज्ञानी है।

एक छोटा बच्चा खेलता है। मां उसको बुलाती है। वह नहीं आता, खेलना चाहता है। उसको खेलने

दो। जब थक जायेगा तो अपने आप आ जायेगा। इसी लिए मैंने किसी को चेलानहीं बनाया। पहले ससार में खूब काम करो। नेकी करो, परोपकार करो, गरीबों और अधिकारीयों की सहायता करो। जबथक जाओ तो अपने आप परमार्थ की ओर आ जाओगे। इसलिए सन्तमत की शिक्षासब के लिए नहीं है। जब थक जाओ तो फिर किसीगुरु के पास जाओ।

नीचे नहीं नाम कोई पावे, ऊंचे चढ़ चौथा पद पावे।
नब नाम राग की धुन गावे, बह पृथ्वी नहीं असमानी है।

मैंने जीवन में बहुत कुछ किया और बहुत दौड़ा। अब बूढ़ा हो गया हूं। शरीरिक तौर से और मानसिक तौर से भी थक गया हूं। इसलिए मेरा इस ओर आना अनिवार्य है। आपलोग भी पहले बढ़ो। संसार में अकली तौर से, शारीरिक तौर से, आर्थिक रूप से और मान प्रतिष्ठा की ओर से उन्नति करो। जब थक जाओगे तो फिर इस ओर आओगे। राधास्वामी मत निवृत्ति मार्ग है। यह मत राजनैतिक नहीं है। इसके अधिकारी बहुत कम है।

नर देह की गति मति को जानो, जो कहता हूं उसको पहचानो।
निज अनुभव से मानो, नहीं भरम के फांस फंसानी है।

वह कहते हैं कि मैंने मानव शरीर को समझा है। हमको यह शरीर काम करने के लिए मिला है। मन अच्छी बातें सोचने के लिए और आत्मा आनन्द लेने के लिए मिला है। इनको खूब Enjoy करो फिर अपने आप इस ओर आ जाओगे। हर एक वस्तु का भोग भोगना पड़ता है। इसके बिना शांति नहीं मिलती। अपने जीवन के अनुभवों से लाभ उठाओ जो आदमी अपने अनुभवों से लाभ उठाता है वह सफल हो जाता है। बाहर का गुरु जीव को ऐसी राय देता है, जिससे उसको जीवन में अनुभव हो जाये और उसे शाँति मिल जाये। दूसरों के अनुभव से तुमको केवल अकली लाभ होगा। पिछले समय में साफ कहने का दसतूर नहीं था और हजूर दाता दयाल जी महाराज की बात मेरी समझ में नहीं आती थी। इसलिए उन्होंने मुझे यह काम सार भेद देने और मेरे कल्याण के लिए दिया था। इस काम के करने से मैंने अपने जीवन में अपने अनुभवों से स्वयं लाभ उठाया।

है कर्म इन्द्री नीचे भाई, ऊंचे ज्ञान इन्द्री जगा पाई।
मन बुद्धि से जब ऊंचे जाई, यह विधि तुमको समझानी है।

कर्म इन्द्रिया और ज्ञान इन्द्रियां अपना अपना काम करती हैं। जब इनसे तुम थक जाओगे तब इस ओर आओगे। गुरु क्या समझ देता है ? कि ऐ मानव यह जो कुछ भी है, यह तेरा अपना ही रूप है। मगर इस बात की जल्दी समझ नहीं आती। जबतक खेलते खेलते कोई थक नहीं जाता वह तो खेलेगा ही।

तीनों से ऊंचे सुरत रहे, ऊंचे चढ़ कर वह शब्द गहे।
इस शब्द मैं नाम का रूप लहे, यह नाम महा सुखदानी है।

नाम सुखदानी है। सारा दिन काम करने के बाद जब खूब थक जाते हो तो फिर ऐसी नींद आती है कि दीन दुनियां की कोई सुद्ध नहीं होती। वही सुरत हैं। ऐसे ही शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भानों के समाप्त हो जाने के बाद जो अवस्था होती है। उसका नाम परम सुख है और परम शांति है।

नीचे कहां नाम का है वासा, चौथे पद वांध उसकी आशा।

नाम वह अवस्था है। जहाँ तुमको परम सुख और परम शांति मिले। शारीरिक मानसिक और आत्मिक बोध भानों को भूल जाने के बाद जो परम

सुख और परम शांति मिलती है। उसका नाम है "नाम"।

त्रिकोक में काल का है फांसा, यह मरम तुझे जतलानी है।

काल है समय। समय में गति होती है। जहां गति है वहां तुम किसी वस्तु को भूल नहीं सकते। न शरीर को भूल सकते हो, न मन को भूल सकते और न प्रकाश को भूल सकते हो।

कर शब्द सुरत का तू साधन, तब हाथ आयेगा नाम रतन।
राधास्वामी योग का सीख जतन, जो यह नहीं भरम कहानी है।

यदि तुमको यह भेद नहीं मिला तो तुम राधास्वामी मत को नहीं समझे। मैंने जो समझा है, उसको मेरी बुद्धि मानती है। इसलिए मैं यह काम करता हूं।

सब को 'राधास्वामी'

आश्रम से वापसी

लेखक :—

सेठ दुर्गा दास साहिब चण्डीगढ़

आप अपने माता पिता के एक ही पुत्र थे। अच्छी तरह पालन पोषन हुआ। विद्या पढ़ने में बड़े योग्य थे। छोटी आयु से ही बिचार वड़े शुद्ध थे।

खामोशी से जीवन के दिन व्यतीत करते। युवा होने पर विवाह हो गया। गृहस्थ का आनन्द लिया। सन्तान हुई। कारोवार किया। नेक कमाई की। सन्तोष से, शांति से और खुशी से निर्वाह करते। लेकिन होने वाली बात होकर रहती है। एक दिन इस गांव में एक साधु आ गये। गांव के वाहर साधू ने अपना डेरा जमाया। प्रातः सायं सत्संग होने लगा सत्संग में नई २ बाते बताया करते। साधु क्रियात्मिक था, अनुभवी था। गांव के लोग साधु की और खिचे और साधु के सत्संग का लाभ उठाने लगे। राम सरन पर साधु के बचन प्रभाव डालने लगे। साधु

मकान और बिस्तर चाहिए। पूछने पर एक सज्जन उस को आश्रम के सेक्रेट्री के पास ले गया। इसको कोठड़ी और बिस्तर मिल गया। रात आराम से काटी और सारी रात इसी बात पर बिचार करता रहा कि इस संसार में न मकान के बिना निर्वाह है और न बिस्तर के बिना। घर पर सब वस्तुयें तुम्हारी अपनी थी। आवश्यकता पूरी होती थो। यहां किसी दूसरे के आगे प्रार्थना करनी पड़ गई। अधीन बना। गरीबी आ गयी और वह सारी रात नींद न लेसका।

प्रातः उठा। गंगा स्नान किया। लंगर के आगे कतार में खड़ा हो गया। जब इसको बारी आई इस को खाना मिल गया। देखता क्या है वहाँ साधुओं की भीड़ लगी हुई है जो लंगर से खाना लेते हैं, सब को दाल और रोटी बांटी जा रही है। खाना बनाने वाले कई सज्जन हैं। कई सज्जन बाँटने वाले हैं। कई सज्जन लंगर का प्रबन्ध कर रहे हैं। स्त्रीयें भी लंगर में काम कर रही हैं। नमक पोसा जा रहा है, मसाले रगड़े जा रहें हैं, सब्जी काटी जा रही है आदि-आदी।

राम सरन यह सब तमाशा देखता रहा। देखकर चुप रहा। सोचने लगा। घर और आश्रम में क्या अन्तर है। जो वातावरन मैं छोड़कर आया था। यह उस वातावरन से अच्छा नहीं। क्या तूने इसलिए घर बार छोड़ा था ? तुझे क्या मिला। बता तू क्या चाहता है। बाहर आया। एक एक कोठरी में एक-एक परिवार ठहरा हुआ था। महिलाओं की गोद में छोटे छोटे बाल बच्चे हैं। सुन्दर लड़कियां इनके साथ हैं बहुत सुन्दर कपड़े पहन रखे हैं। बहुत अमीर और साहूकार दिखाई पड़ते हैं। आश्रम में एक विद्यालय है। वहां पर बच्चे विद्या प्राप्त कर रहे हैं। आगे बढ़ा। सत्संग हो रहा था। सत्संग ध्यान से सुना। बताया जा रहा था, खूब दान करो। गरीबों की सहायता करो। सब की सहायता करो। नेक काम करो। मान मिलेगा, यश प्राप्त होगा, खुशी मिलेगी। इतने में एक जगह आश्रम में कथा हो रही थी। रामसरन बैठ गया और ध्यान से लगा सुनने।

पण्डित कथा करने वाला कह रहा था कि इससंसार में सुख ही सुख है। इस संसार को कोई छोड़कर जाना नहीं चाहता। इसने एक कथा सुनाई कहनेलगे कि ब्रह्मा

जी सैर कर रहे थे। नारद जी पहुंच गये। नमस्कार किया। नगरी बहुत सुन्दर थी। पूछने लगे कि महाराज ! यह नगरी किस ने बसाई है। और इसका क्या नाम है। ब्रह्मा जी ने कहा कि इस नगरी का नाम स्वर्ग नगरी है और हमने बसाई है ताकि संसार के दुखी लोग यहां आकर आराम और शांति से रहा करें। नारद जी बोले मैं चकित हूं कि यहां पर सब प्रकार के वृक्ष फलदार, नदा नहरें, महल, बाग बगीचे, कई रंगों के पक्षी और शहद और दूध को नदियां हैं। कहीं कोई मानव नहीं है। यह क्या बात है। अश्चार्य है ! ब्रह्मा जी बोले। भई ! संसार छोड़कर कोई स्वर्ग नगरो में आना नहीं चाहता है। इसलिए स्वर्ग नगरी सुन्नसान स्थान है। नारद जी बोले। मेरा एक भक्त है जिसको ले आओ। ब्रह्मा जी बोले ले आओ।

नारद मृत्यु लोक पधारे और अपने शिष्य के घर गये वह एक बूढ़ा बनिया था। बोलने लगे, चलो तुमको स्वर्ग नगरी ले चलूं। वहां पर बड़ा आनन्द है। हर प्रकार का भोजन मज़ेदार फल, मेवा दूध और माखन मिलेगा। कोई काम नहीं। आराम

करने के लिए महल होगा। चलो मेरे साथ चलो। ब्रह्मा जी ने यह नगरी बनाई है। वहां सुन्दर बाग बगीचे, नहरें और तलाब हैं। तो भक्त ने कहा कि मेरे बच्चे छोटे २ हैं इनको अभी होश नहीं जब यह सयाने हो जायेंगे फिर चलूंगा। भक्त बिमार हो गया, मृत्यु आ गई। नारद जी उस समय प्रकट हुए और कहने लगे, चलो तुमको स्वर्ग ले चलूं। तो भक्त ने उत्तर दिया कि बच्चे जवान तो हो गये हैं लेकिन बेहोशी की नीद सो जाते हैं। रात को इनको कोई लूटकर न ले जावे। थोड़े बड़े हो जायें फिर चलूंगा। भक्त कुत्ता बन गया और अपनी संतान की चौकीदारी करने लगा। एक रात अधिक भौक रहा था। इसके लड़के ने इसके सिर पर लाठी मारी। कुत्ता मर गया नारद जी प्रकट हुये। कहने लगे अब तो तुमको मज़ा आ गया। तुम्हारे ही लकड़े ने तुमको मार डाला। अब होश कर। चलो स्वर्ग ले चलूं। कुत्ते ने उत्तर दिया। यह लड़के नालायक हैं। सब धन नष्ट कर दिया। कुछ थोड़ा सा धन मैंने दबा कर बचाया हुआ है। मैं चाहता हूं कि कठिन समय में इनके काम आ जाये। भक्त ने साँप का जन्म ले लिया। सो लगा धन की

राखी करनें। लड़के धन ढून्ड रहे थे कि बड़े लड़के नें कहा कि मुझे याद है कि पिता जी ने इस कोठरी में धन दबाया था। फिर क्या था धन को लगे खोदने। साँप इस पर बैठा दिखाई दिया। सांप के सिर पर लाठी मारी और सांप को मार दिया। नारद जी उसी समय प्रकट हुए और साँप से कहने लगे। अब तो चलो स्वर्ग नगरी ले चलूं। तो भक्त ने उत्तर दिया गुरु जी आप अपना काम करें मैं तो अपने बच्चों को देख-देख कर जीवित हूं। वह नाली का कीड़ा बन गया। यह सारे संसार की दशा है।

नारद जी वहुत उदास हुये। सोचने लगे ब्रह्मा जी को क्या कहूंगा कि कोई संसारी आदमी स्वर्ग आना ही नहीं चाहता। इतने में इसकी दृष्टी एक सूर पर पड़ी। इसको नारद ने कहा। चलो तुमको स्वर्ग नगरी ले चलूं। वहां दूध पीने को, फल खाने को कोई तुमको तंग नहीं करेगा। तो सूर ने पूछा कि क्या वहां बिष्टा है। उत्तर मिला। स्वर्ग में गन्दगी का क्या काम। तो सूर ने कहा तब मैं वहाँ नहीं जाऊंगा।

पण्डित कथा वाचक ने कहा कि इस संसार को कोई छोड़ना नहीं चाहता। क्योंकि यहां ही स्वर्ग है, यहां आनन्द है, यहां खुशी है और यहां शांति है। यह कथा सुनकर राम सरन सोचने के लिए विवश हो गया। संसार छोड़ दो। कौन सा संसार? कैसे संसार छोड़ दूं। क्या जो मैंने छोड़ा वह संसार था। क्या यह आश्रम संसार नहीं है? रामसरन का मस्तिष्क चक्कर खाने लगा। फिर सोचने लगा कि संसार क्यों छोड़ूं? संसार में कौन सी बुराई है? कौन सा कष्ट है? कौन सा दुख है? आखिर सुख दुख इकट्ठे ही रहा करते हैं। यदि इकट्ठे रहते हैं, रहने दो। तुम अपने काम से काम रखो। सुख भोगो। दूसरों को अपना बना लो। अपने से प्रेम करो। प्रेम का सम्बन्ध और दृढ़ हो जायेगा।

क्या नेक काम करना, गरीब की सहायता करना किसी का दिल न दुखाना, शुद्ध कमाई करना, किसी के अधिकार पर अपना अधिकार न जमाना। कितने अच्छे काम हैं। जब जीवन मिला है ऐसे काम करो क्या ईश्वर इन कामों पर खुश नहीं होता? फिर

इसनें कहा स्वर्ग इसी संसार में ही है। संसार को स्वर्ग बनालो। यह काम तो तेरे वश का है।

राम सरन को होश आई। सम्भला, घर की ओर चल पड़ा। कह रहा था कि मैं गृहस्थ आश्रम में ही रहकर अपने जीवन का सुधार करूगा।

गृहस्थ आश्रम एक ऐसा-आश्रम है जिस मैं रह कर मानव काम, क्रोध, लोभ, मोह और अंहकार के भावों पर काबू पा सकता है। अनासक्त रह कर सब खेलों का आनन्द ले सकता है। निष्काम सेवा और निष्काम कर्म कर सकता हैं। अच्छी कमाई से जीवन के दिन व्यतीत कर सकता है। मन को व्यस्थ रख सकता है। दूसरों का आसरा बन सकता है। भलाई कर सकता है। नेकी कर सकता है। गरीबों की सहायता कर सकता है। महाराजा जनक गृहस्थ आश्रम में होते हुये विदेह मुक्त थे। आवागवन से छुटकारा असानी से पा सकता है। परमपद को प्राप्त कर सकता है। आद परम सन्त कबीर साहिब, गुरु वानक देव जो महाराज और राधा स्वामी दयाल सब गृहस्थी थे। गृहस्थ आश्रम

ब आश्रमों से श्रेस्ट और उत्तम समझा गया है।
कर भी इस आश्रम का त्याग नहीं करना
हिए। शर्त यह है कि जीवित पूर्ण सत्गुरु यदि मिल
ाये और गृहस्थ आश्रम में जीवन व्यतीत करने का
ा मिल जाये।

सूचना

मानव मन्दिर का मैंने कोई मूल्य नहीं रखा। क्योंकि मुझे दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज ने चोल छोड़ने से पहले शिक्षा को बदलने की आज्ञा दी थी। मैं जो कुछ समझा और अनुभव किया वह किसी धर्म या प के धर्मग्रंथों से नहीं लिया। यह मेरा निज अनुभव है क्योंकि निज अनुभव का नाम ही ज्ञान है, मैं अपने ज्ञा को बेचता नहीं। तुलसीदास जी ने रामायण में भरत जबानी यह ख्याल जाहिर किया है कि ब्राह्मण के लिए वे का बेचना महापाप है। वेद नाम है ज्ञान का। इस पत्रिक के पढ़ने वालों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। मैं यह हाथ जोड़ कर पढ़ने वालों से प्रार्थना करूंगा कि अगर किसी को इसके पढ़ने में रुचि न हो और जीवन को नियम-बद्ध बनाने की जरूरत न हो या इन मेरे विचारों से किसी को सन्तुष्टि, उत्साह, खुशी और शान्ति न मिलती हो तो वह मानव मन्दिर को न मंगवाए और जो मंगवा रहे हैं अगर लिख दें तो हम न भेजें। अगर कोई यह समझता है कि मेरे इस काम से किसी को फायदा पहुंचता है तो वह मानवता मन्दिर की सहायता करे ताकि यह काम जारी रखा जाय।

पत्र व्यवहार में मानव मन्दिर का क्रमाँक नं० जरूर दिया करें।

—फकीर

भूल
चा
ज
पत

Regd. No. 26265/74

MANAV MANDIR

P—Hsp—7.

1283

ADDRESS

To

Sh: A. Haumonth Rao.

H. No: - 10-3-194/8

Humayun Nagar

Hydrabad 28 (A.P)

-500028-

From:

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.